बुलबुले सी जिंदगी

छंद मुक्त १०१ कविताओं का संग्रह

रचियेता :

सुरेश चौधरी"इंदु"

शुक्तिका प्रकाशन

शुक्तिका प्रकाशन
न्यू अलीपुर, कोलकाता ७०००५३

@सर्वाधिकार लेखकाधीन

लेखक: सुरेश चौधरी"इंदु"

मूल्य: रु.१२५/-

ISBN NO: 978-93-84435-18-9

मुद्रक:
मिश्का इन्फोटेक
कोलकाता ७०००४६

BOOK: **BULBULE SI JINDAGI** , POETRY BOOK BY **SURESH CHOUDHARY"INDU"**

रामेन्द्र मोहन त्रिपाठी

विगत चार दशकों से हिन्दी मंचों पर संप्रेषण की गुणवत्ता युक्त शीर्षस्थ गीतकार के रुप में प्रतिष्ठित । अत्यधिक लोकप्रिय कवि जिन्होंने कविता की हर विधा में श्रेष्ठ रचनायें कीं । जिनके गीत फिल्मों में भी सराहे गए, रामायण धारावाहिक (२०१०) में भी सराहे गए ।

कविता एक नदी है, जो भावों की धरा पर अथकित अनवरत बहती रहती है, जिसके किनारे पर बैठ कर कवि चिंतन करता है, और नूतन दर्शन के मोती चुन लेता है | सुरेश चौधरी "इंदु" के संकलन "बुलबुले सी जिंदगी" को मैंने आद्योपांत पढ़ा है, तीन बार पढ़ा है, हर बार यही सोचा है कि छंद से इत्तर भी इन कविताओं में लय विद्यमान है, जो काव्य की आत्मा है | आत्माविहीन शरीर का कोई अर्थ नहीं होता इसलिए इस संकलन के पाठक को विविध रंगों में अपनी ही जिंदगी की यात्रा दृष्टिगोचर होती है | परिवार के शाश्वत संबंधों के अनुराग से आरम्भ करते हुए "चौधरी" गीता के दर्शन को भी आत्मसात करते हैं, और मानव जीवन की क्षण भंगुरता का बोध कराते हैं | मुझे आनंद की अनुभूति का वह क्षण भी मिला जहाँ स्वयं की समाधि लग जाया करती है | यही कविता की श्रेष्ठता का प्रमाण है | कविता के कैनवास के विस्तार का अनुमान नहीं लगता है, कि कहाँ

कवि गया है | परन्तु वह जहां जहां गया है वहाँ जीवन है, जागृति है, स्तुति है प्रगति है, प्रभाव है | मैं संकलन के यशस्वी होने का आशीष देता हूँ |

रामेन्द्र मोहन त्रिपाठी
४४A, प्रतापनगर, आगरा -२, उत्तर प्रदेश,
मो: ९४१२२ ६४९८८

हरतालिका २४-०८-२०१७

प्रिय पाठक वृन्द,

पुस्तक "कुछ माणिक कुछ मोती" मेरी कुछ छंद बद्ध रचनाओं की प्रस्तुति थी, पुस्तक को आप सबने बहुत सराहा, धन्यवाद| प्रस्तुत पुस्तक बुलबुले सी जिंदगी १०१ छंद मुक्त कविताओं का संग्रह है, जीवन के विभिन्न आयामों पर मेरी भावनाओं को व्यक्त करने का प्रयास मैंने इन रचनाओं में करने का प्रयास किया है| आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है आपको यह संग्रह अवश्य पसंद आएगा| प्रारंभ विश्वगुरु योगेन्द्र श्रीकृष्ण की वंदना से किया है पुनः भारत के साहित्य गुरु ,गुरु रवीन्द्र का वंदन है तत्पश्चात मात पिता को नमन किया है| एक अन्य पुस्तक तिमिर ढलेगा में मैंने १०१ कविअताओं से जीवन की प्रेरणा को जीवित करने का प्रयत्न किया है वह भी साथ –साथ ही आ रही है| मैं साहित्य का विद्यार्थी तो नहीं और न ही मैंने कवि होने का भ्रम पाला है, पर जो मन में भाव आते हैं उन्हें कलम द्वारा कागजों पर उतारा है, अतः गलतियाँ स्वाभाविक हैं,आप से अनुरोध है कि गलतियाँ जो भी आपको नज़र आयें, मुझे सूचित करें ताकि दूसरे संस्करण में उसे सुधार सकूँ.

आपका
सुरेश चौधरी “इंदु”

1. नमन...........

जयति जयति यदु नंदन ,
जयति राधा रमण-श्याम वंदन,
हे विश्व तारणहार-हे प्रभु, हर क्रंदन
नमन-अभिनन्दन ||

जन्म लिया लिए सम्पूर्ण कलाए,
कर्मवीर-योग प्रणेता-गीता ज्ञान कराये,
हे, गोपाल-हे गिरधर-हे यशोदा नंदन,
शत-शत वंदन ||

महा-रास रचाए -हे भक्ति ज्ञान के सृष्टा
भक्त वत्सल-पालन हार-हे युग द्रष्टा,
हे नटवर नागर- अद्भुत छटा विराजे वृन्दावन,
प्रफुल्लित मन-हर्षित तन-
नमन तुझे राधा रमण ||

चितवन मनोहारी,
मात दे कमल-जलाशय को
शरदकाल में जैसे सुन्दर निर्मित
शतदल कोष की लहरें हों,
हे राजीव लोचन-मन मोहन
सर्वदा कोमल चरण नमन ||

भव-सागर से करो पार,
कामना बस यही, रख कर-कमल सर पे
हे कष्ट हारी, हे मुरारी,
तुम हरो कष्ट, अदभुत वर दे,
हे वृष्णिधुर्य ! निरंजन
आशीर्वाद दें, चितरंजन ||

2. रवीन्द्र नाथ ठाकुर को समर्पित

गुरुवर नमन शतशत नमन
साहित्य प्रगल्भ पराकाष्ठा
नव-तरंग अंतस की आस्था,
विभावरी मंडित व्योम पर
विधु सम अवभासित

जन गण मन अधिनायक
सत्यनिष्ठ जन नायक
विशालता का उद्‌गम
दूरदर्शिता का परिचायक,

नवरचना संवाहक
नव प्रेरणा संचारक
हृदयंगम रोचित कला प्रसारक,
विश्व भारती विचारक,

चित्र कला, संगीत कला, साहित्य कलाधिपति
अद्‌भुत विलक्षण प्रतिभाधिपति,
गीत गीतांजलि भाव भावांजलि अतिमति
पुरुष्कृत कलावती

भारत भाल के द्‌युतित शृंगार
परमात्मा के अप्रतिम उपहार,
नमस्कार नमस्कार नमस्कार !

3. मातृ- वंदना

माँ,
अपार तू,
विचार तू,
संसार तू,
जीवन-आधार तू,
हमारा प्यार तू,
सुखों का अम्बार तू,
ह्रदय का उदगार तू,
अक्ष तू,
प्रतिपक्ष तू,
शान तू,
अभिमान तू,
तेरे गुणों के वर्णन की थाह नहीं,
तू मेरी भगवन कोई चाह नही |
क्या दूँ तुझे उपहार,
जन्म-दिन आपका सबसे बड़ा त्यौहार |

पच्चासी वर्षो का आपका अनुभव,
एक दृढ़-अचल वट-वृक्ष,
छाँव तले फले-फुले,
बनाया आपने दक्ष |
तेरी कल्पना शक्ति,
तेरी स्नेहिल प्रेमाभिव्यक्ति |
ममतामयी आँचल,
प्रति-क्षण-प्रतिपल,
बढ़ाता आत्म-बल |

हे मातेश्वरी !
तू कितनी करुणा-मयी,
तू वृक्ष एक विशाल,
हम इनकी हरी-भरी डाल |

पुष्प-लताओं से सज्जित,
करती वाटिका सुरभित |
तू हमारा अभिमान,
तू हमारी शान |
कुछ दे पाऊं सामर्थ्य नहीं
ऋण उतार पाऊं,
यह अविचारणीय है,
बस इतना हो सके मुझसे कि,
तेरे स्वप्न करूँ अभिभूत ,
माँ नहीं बता सकता मेरे जीवन में
तू परम आदरणीय है|
तू वन्दनीय है
नमन................!
........२६ सितम्बर २०११

4. माँ

माँ
अक्सर मुझको
ताकती रहती है,
मेरे अन्दर उठते बैठते ज्वार को
कातर भाव से भांपती रहती है |

माँ की
नब्बे साला अनुभवी आँखें
क्षितिज के उस पार

बुलबुले सी जिंदगी

बादलों की गड़गड़ाहट
बिजली की चकाचौंध
को देखती है
और
देखती है
दूर दो फाड़ हुए
आसमान से
चुते हुए दर्द को |

माँ
आद्र नेत्रों से जब देखती है
तो लगता है
मानो कह रही हो
दधिची की तरह ले लो
मेरी हड्डियाँ
और अपने
जर्जर शरीर को वज्र बना लो,

माँ
जब
बहुत घबरा जाती है
तब
अपने को सिकुड़ा कर
बिछौने में
और समेट लेती है
जैसे वही उसका आकार है
और
अपनी कलम लेकर
बैठ जाती है लिखने
वही तत्व विवेचन
जीवन का दर्शन
एक अनुभव
जो झरनों की तरह

कल कल नदियों की तरह
गर्जन करते सागर के किनारे खड़ी
नम हवाओं से मिला था उसे|

माँ

बुलबुले सी जिंदगी

सफ़ेद धवल साड़ी में
ऐसे लगती है जैसे
अभी अभी स्निग्ध चाँदनी
शीतलता बिछाए सुख पहुंचा रही हो |

माँ
जब मुस्कुरा देती है तो
लगता है सारी कायनात
जगमगा गयी हो
जिजीविषा की एक प्रबल इच्छा
जागृत हो उठती है|

माँ
मेरी देह में लहू बन
बहती है
मैं अपने में माँ को
अनुभूत करता हूँ,
माँ की ममता
मेरी देह में आत्मसात है
जब थक जाता हूँ
तो
देह में बसी माँ को
जान कर
उस ममत्व की गोद में सो जाता हूँ
शांत, सभी दुःख और चिंताओं से परे
एक अबोध बालक की तरह
सो जाता हूँ ....|

5. मेरे बाबूजी

दुपहरी की बेला थी
अंतस भी था कुछ उचटा उचटा सा
संयमित करना चाहता था निज को
फिर भी न जाने क्यूँ था उखड़ा उखड़ा सा,
विगत स्मृतियों में,
भुलाकर
साहित्य में डुबाकर
सो जाना चाहता था
पुस्तकों की अलमारी के द्वार खोल
खोजने लगा मन चाही पुस्तक,
पढ़ कर जिसे
खो जाना चाहता था |

दृष्टी पड़ी अकस्मात्
बाबूजी की लिखी पुरानी डायरियों पर
हुक सी उठी
स्पंदित हुए जज्बात |
उठाकर डायरी पढ़ने लगा
विगत स्मृतियाँ
चलचित्र सी तैरने लगी
हर हर्फ़ अब भी स्वर्ण सा चमक रहा था
सूखे गुलाब की पंखुड़ी सा महक रहा था |

कागज के पन्ने कागज के पन्ने नहीं थे,
हर पन्ना सम्पूर्ण इतिहास था,
मध्यवर्गीय परिवार के मुखिया के
जिम्मेदारियों का अहसास था |
नयन नीर बहने लगे
प्रगाढ़ता क्या होती है
हर शब्द कहने लगे
संबंधों के बंधन
कितने मज़बूत होते हैं
हम समझने लगे |
उनकी गोद
का गरम अहसास

बुलबुले सी जिंदगी

अब भी हो रहा था महसूस
लग रहा था
एक
वट वृक्ष के तले
बैठा हूँ महफूज |

जब सूरज की रौशनी भी लूट गयी थी
जब चाँद की चांदनी भी गुम हो चली थी
तब अँधेरे मार्ग पर
ले एक छोटा सा दीया
आपने मार्ग दिखाया
जीवन मार्ग
जो दिखाया था आपने
आज भी प्रशस्त है
जो कुछ भी हूँ
बाबूजी
आपका है बताया |

अफ़सोस तो यह है
इतनी जल्दी क्यूँ चले गए
अभी पुष्प खिला भी नही था कि
तुम छोड़ उपवन चले गए ||

6. माँ तो माँ होती है

माँ तो माँ होती है,
अविस्मर्णीय प्यार, दुलार और स्नेह की जनक

माँ प्यार करती है, तो करती है,
विवेक, तर्क और ज्ञान का
स्थान नही माँ के प्यार में,
अथाह सागर की गहराई सा प्यार
प्यार जो निश्छल है
प्यार जो मात्र देय है
प्यार जो स्वार्थ की सीमा से पुर्णतः अछूत है
प्यार जो बस अकूत है अकूत है

माँ रक्षक है, है तो है,
डरती नही जननी किसी भी वार से
माँ का आँचल
ऐसा सुरक्षा कवच
भेद सके न कोई,
किसी भी तलवार से
सचेत प्रहरी सी सजग
भूल जाये निज व्यथा
माँ तेरी यही कथा

माँ दुःख सह कर भी सुख देती है, तो बस देती है
जाग रात रात भर
नींद सुनहरी वह देती है,
हाथों की थपकी जिसकी
देती परम शांति
किसलय हो मुख कांति
भूखी हो वह तो क्या
बेटा न सो जाए भूखा
राह ताकती रहती है
माँ है वह माँ
दिन रात बेटा बेटा रटती है ||

नमन माँ तुझे नमन
शत शत नमन
कृपासिंधु बरसाए रखना,
आशीर्वचनों की छांव में बैठाये रखना ||

7. जीवन सारगर्भित तत्व

जीवन एक सत्य सारगर्भित तत्व
प्राज्ञत्व व्रीडीत व्यक्तित्व,
अहंकार स्थापित्य
अति संवेदन शील
आशायें आच्छादित
वर्जनाएं अपेक्षित,
अंतर्मन एवं अहम् का द्वन्द
लक्षित सदृश मकरंद,
कभी सुवासित
तो कभी अवसादित,
निष्कर्ष जीवन
कभी द्युत्मान सबेरा
कभी रात्रि का अँधेरा ||

आशाएं क्षत
अवनी व्योम जीवन ज्योत असंतप्त,
अर्भ सम जीवन
द्रूम पात निपात सा विचरण,
ध्येय विहीन संबल हीन संपीड़ित
रात्रि तिमिर आसन्न
आरूषी प्रथम प्रहर मध्य प्रछन्न,
जीवन परिणिति
सुख दुःख की लहर हेम रेतकण पर लहराती
जीवन तट पर बन झंझा द्वन्द कराती,
कर ग्रहण ज्यूँ कलकल निनाद
दे आत्मसुख अति प्रमाद ||

8. ख़त

बुलबुले सी जिंदगी

ख़त
जो संभाल कर रखे थे हमने
आज भी वैसे ही रखे हैं
अंतस के तहखाने में
जब भी
उदासियाँ छाती है
मन अतीत में डूब जाता है,
संदूक खोल
उस अनमोल खतों में खो जाता हूँ,

हर हर्फ़
सोने सा चमकता
खुशबु बिखेरता
रजनीगंधा सा
अतीत को सुरभित करता
दिल दिमाग पर रोशन हो जाता है,
खतों का मोल
कितना है क्या है
वो क्या जाने जो
ईमेल, व्हाटसएप्प की दुनिया में जीते हैं,
डाकिये का इंतज़ार
ख़त का मिलना
हाथों का थरथराना
दिल की धड़कनों की तीव्रता
गुलाबी नशा
कैसे चढ़ता है
कैसे उतरता है
क्या जाने अब लोग
अब तो
बटन की क्लिक पर संवाद होते हैं
न तो अहसास होते हैं,
न छुवन भरे अल्फाज होते हैं,

कभी हम लिखा करते थे
खतों में
दिल उतारा करते थे
बैचेनी का वह आलम
ख़त न मिले तब भी
और धड़कनों का बढ़ना
ख़त मिले तब भी |

डाकिया बाबू
गाँव में शहरों में लिए
एक ही झोले में
खुशियाँ गम
बांटते सबको हरदम
रुतबा था उनका
गाँव गाँव ख़ुशी में,
गम में हिस्सेदार थे
अब तो कुरिअर आ जाता है,
ईमेल, एसएमएस, व्हाटसएप्प पर
पैगाम पहुँच जाता है
होता न कोई अपनत्व
होता न कोई बातों का महत्व,

ख़त संदूकों में सो रहे हैं
दर्द लिए
भावनाओं के संप्रेषण को रो रहे हैं |

9. जी हाँ मैं भी प्रेम लिखता हूँ ......

प्रेम दिवस पर देखे सैंकड़ो प्रेम इजहार
प्रेम, प्रीत, मोहब्बत कहीं प्यार,
कभी कभी मैं भी प्रेम लिखता हूँ,
जी हाँ मैं भी प्रेम लिखता हूँ ......
जब देखता हूँ,
माँ का आँचल है तार तार
अंखियों से बहती अनवरत अश्रुधार
गोद में पड़ा शिशु भूख से बेजार
तब शुष्क स्तनों में उतर आती दूध की बूंदें दो चार
देख यह वात्सल्य दृश्य मैं प्रेम लिखता हूँ,
जी हाँ मैं भी प्रेम लिखता हूँ ......

धुलधूसरित बालक थक स्कूल से जब आता है
दौड़ वह माँ के आगोश में समा जाता है
लाख बलैया ले माँ उसका शीश जब चूमती है,
देख यह उत्सर्जित प्रेम धरा भी झूमती है
मैं भी नतमस्तक हो प्रेम शब्द लिखता हूँ,
जी हाँ मैं भी प्रेम लिखता हूँ ......

धरा पर गगन बरसा रहा हो अंगार
कृषक के हाथों फिर भी कृषि के औजार
माथे रोटी की टोकरी हाथ छाछ का गिलास

लाती हो पत्नी
बैठ प्रेम से, पोंछ स्वेद कण,
कौर रोटी का खिलाती हो पत्नी
वसुंधरा भी देख यह शास्वत प्रेम
हौले हौले मुस्काती है
लेखनी मेरी भी तब तब प्रेम गीत गाती है
जी हाँ मैं भी प्रेम लिखता हूँ ......

भैया दौड़ बहना के दुपट्टे से हाथ जूठे पोंछता है
बहना मुस्का हलके से मुख चपत लगाती है
पकड़ उसके कपोल धीरे से सहलाती है
तब स्नेहसिक्त दृश्य देख मैं प्रेम लखता हूँ,
जी हाँ मैं भी प्रेम लिखता हूँ ......

सुरमई चांदनी रात है,
तारों की सजी बारात है,
अंखियों में निद्रा दूर बहुत दूर है,
कल की चिंता से मन मजबूर है
केशों में थिरकती अंगुलियाँ और
पत्नी के मीठे दो बोल,
क्षण में लाते नींद करते चिंता को गोल
प्रेम के इस विशुद्ध बंधन को प्रेम मैं लिखता हूँ,
जी हाँ मैं भी प्रेम लिखता हूँ ......

मेरा प्रेम कोई विषय नही प्रदर्शन का,
मेरा प्रेम विशुद्ध चिंतन है दर्शन का
मेरा प्रेम गोपी गीत सा पवित्र है
मेरा प्रेम मीरा का भक्त चरित्र है
प्रकृति के कण कण में विराजमान है,
जड़ में, चेतन में, पशु में, खग में, सब में समान है,
भारतीय संस्कृति की धरोहर सा सच्चा वन्दनीय है,
हीर-राँझा, ढोला-मारू, राधा-कृष्ण सा पूजनीय है,
न अश्लीलता से भरा, न वासना से भरा
और न कलंकित है
मेरा प्रेम तो शुद्ध सात्विक शाश्वत
मानस पर अंकित है |
इस प्रेम को ही मैं प्रेम लिखता हूँ,
जी हाँ मैं भी प्रेम लिखता हूँ ......!!!!!!!!!

10. बाल्मीकि के राघव

हे बाल्मीकि के राघव
हे तुलसी के आराध्य श्री राम,
क्या यह सच है,
विश्व कल्याण हेतु तुने जन्म लिया
यह जान कर भी की अन्याय सहना अधर्म है
मात्र
पितृ वचन की पूर्णता एवं
पुत्र धर्म के निर्वहन हेतु
तुमने वन-गमन स्वीकार किया,
असुरों से पटी धरा के उद्धार
पार्षद जय-विजय के कल्याण को सोच
तुने यह निर्णय सिरोधार्य किया,

धर्म के दसों गुणों से अभिभूत
मानव रूप धर
पुरुषोत्तम कहलाये
फिर गर्भावस्थ सीता को
वन भेजना कितना न्याय संगत था
क्या पति धर्म पर राजधर्म भारी था
जानता हूँ सीता वन-गमन की पीड़ा
आपके लिए भी उतनी ही कष्ट प्रद थी
जितनी माँ सीता के लिए
परन्तु जानना चाहता हूँ प्रभु
कोई मध्यस्थ मार्ग नही था
कोई अन्य मार्ग नहीं था ?

11.चरैवेति चरैवेति

बुलबुले सी जिंदगी

अति शीघ्र
हाँ अति शीघ्र
तुम्हें ज्ञात हो जाएगा
डैफोडिल, रजनीगंधा और गुलमोहर
एक ही बाग़ में खिल रहे हैं
एक ही हवा, पानी और खाद से जी रहे हैं
विश्व सिमट कर
समा गया है उस बाग़ में
अब जब तुम
आँख खोलोगे तो देखोगे
कैसा होता है
सुबह का सूरज अरुणिमा लेते हुए
कैसे होते हैं पंक्षी चहचहाते हुए
नंगे पांओ से ओस सिचित दूर्वा पर टहलना
माटी की सोंधी खुशबु
सब कुछ खुशनुमा दिखेगा
क्योंकि सोच जो बदल गयी है
चरैवेति चरैवेति मन्त्र है अब
न रुकना न झुकना
बस प्रेम और सद्मार्ग पर बढ़ते रहना |

12. घनघोर घन

कालिदास की कल्पना के सूत्र
क्या तुम्हें
प्रेयसी मिली नहीं
या
उसने प्रणय निवेदन ठुकरा दिया
जो
क्रोध निकाल रहे हो |

रातभर
तुम बरसते रहे
गुर्रा गुर्रा कर,

आँखे तुम्हारी
चमक रहीं थी चपला सी,
और
हम डरे डरे
घर में पड़े पड़े
दुबके से
देखते रहे
तुम्हारा बरसना
तुम्हारा गरजना |

13. बांस के जंगल

अतीत की स्मृति मंजूषा
खोल देखा
तो पाया स्वयम को
ओडिशा के गहन वनों में
देख रहा बांसों के विशाल जंगलों को दूर से |

पेपर की फेक्टरियों के लिए लदे
ट्रक पर ट्रक,
कराते प्रकृति का दोहन वे
सीधे साधे मजदूरों से
अस्त व्यस्त त्रस्त
कितने लाचार कितने मजबूर से |

नज़रें आतुरता से कटते
पेड़ों को देखती
श्रमिक उन दिनों जिस हाल पर थे
आज भी उसी हाल पर हैं
मात्र अंतर आया है तो संतुष्टि का
पहले भी इंतजार था आज भी है व्यष्टि का
वक्त बदलेगा सुबह होगी जरुर से |

कच्ची कच्ची बांस की कोपलें
काट कर ला कर देती श्रमिक महिला
आज भी बाल मन पर इंगित है
सांवला रंग, पर सस्मित मुख
पीठ पर लादे शिशु को
पर दृष्टिगत होता था अपार सुख
चिंगारी निकलने को तैयार थी इस अंकुर से |

कितना स्वादिष्ट आचार
बनाती थी मामीजी
उन बांस की कोपलों से,
सोच कर आज भी
वह स्वाद मुंह में तैर जाता है,
और तैर आती हैं यादें
बलांगीर, कालाहांडी, संबलपुर के उन जंगलों की,
जहाँ सह कर भी हर दर्द रहते मसरूर से |

14. मैं और ईश्वर

ईश्वर से पूछा मैंने
आपका अस्तित्व

और
मेरा अस्तित्व
क्या अलग अलग है,
हम तो अन्तर्निहित हैं
न कोई तुम्हारा अस्तित्व है
न कोई हमारा व्यक्तित्व है
बिन एक दूजे के,
मैं गरीब तब ही आप हो गरीब नवाज
मैं पतित तब ही आप हो पतित पावन
मैं दीन और आप दीनबंधु
आपका और मेरा सम्बन्ध तो
शमा परवाने सा है
परवाना शमा पर जल जल मरता है
शायद क्योंकि
परवाने को अपनी ज्योत में बुलाने के लिए
खुद शमा को भी जलना पड़ता है
तप, त्याग, नियम की शमा जलाकर
आप और मैं
मैं और आप
एकाकार हो गए
जैसा हूँ जैसा भी हूँ आपका हूँ
समर्पण भाव से हूँ
स्वीकार कीजिये |

15. मेरी रचना

चाह यही है,
मैं पुष्पलता बन लिपट जाऊं
तुम्हारी देह की
समुचित महक
मुझ मे रच बस जाए
मेरी प्रातः की प्रथम सांस

तुमसे सुरभित हो जाय
और उसी क्षण
तितली बन मैं खूब मंडराऊं
दिनभर उसी महक में बहकूँ
और रात भर
स्वयम को समेट कर
तुम्हारे ह्रदय के गुलदस्ते में
निज अस्तित्व को विलीन कर दूँ,
क्योंकि तुम रात भर एक तूफान बन
मेरी अर्ध निद्रा में
मुझे विचलित कर रहे थे
सोचती हूँ
क्या तो बिखर जाऊं
या तो संवर जाऊं
यही तो अंत है मेरी रचना का |

16. मानस शांति की चाह में

तीक्ष्ण प्रकाश पुंज
नेत्रों को चीरता
अपरिमेय
वास्तविकता से परे
ज्ञेय अज्ञेय श्रोत
मार्तंड सा प्रचंड
अभिशापित उद्दंड,

यूँ लगे उन्मथ करती जीवन गति
आवृति पुनरावृत्ति से पूर्ण
घटित एक घटना पुनः घटित
न चाह कर भी क्षोभित करती है
कोई घटना घटित हो तो भुलाई जाती है
कोई अंतस को झकझोर जाती है

मानस शांति की चाह में
जाता है अनेक राह में
अपूर्णता ही अंततः परिणाम है

अवरुद्ध मार्ग ही अंजाम है
शांति निज अंतस में है
कस्तूरी सी
ढूँढते हैं विश्व भर
निष्कर्ष
विहवलता विचलित करती जाती है
अनिश्चितता बढ़ती जाती है ||

17. एक सिपाही की राखी ....

दहलीज पर बैठी बहना
बाट जोहती भैया का
छोड़ चूल्हा चाकी
ले हाथों में राखी,
आयेंगे भैया
सदा की तरह उठा हाथों में
लगा एक चक्कर

बुलबुले सी जिंदगी

कहेंगे
लाडो तेरी याद बहुत सताती है,
बर्फीली पहाड़ियों में
बस तेरी बुनी स्वेटर ही सुहाती है,
कलाई पर बंधी राखी
बड़े जतन से सहेज
रक्खा हूँ बक्से में
देखता हूँ रोज ले नयन सजर
सरहद पर तू ही तू आती हो नज़र,
कितनी हो गयी हो दुबली
आने दो दामाद जी को लूँगा खबर|

ख्यालों में खोई थी बहना
आंसू से भरे थे नयना
हाथों की राखी भींग रही थी
आरती की थाली कोने में सुनी सुनी पड़ी थी,
घुसपैठियों से सामना करते
शहीद भैया हुए
मातृभूमि की रक्षा कर
राखी का मोल चुकता कर गए|

बंधाई थी उसने दो राखियाँ
बहन की रक्षा
और
रक्षा मातृभूमि की,
भारत माँ की रक्षा को सपूत
बंधा रक्षा सूत |

18. मरते अन्नदाता

भूमि सहनशील है,
यह पढ़ा है, जाना है हम सबने
भूमिपुत्र क्यूँ नहीं रहे अब,
क्यों व्योम चीर वारिद कहकहाने लगे
क्यों वे करका पात से घबड़ाने लगे |

क्या अब
राजनीति की कल्मष पर
हरित धरा भी कलुषित हो गयी
या संतुष्टि परिवर्तित हो पराजित हो गयी
या सुजलां सुफलां शस्य वसुंधरा
कुपित हो जल फल विहीन हो गयी|

अंध राजनीति वीथिका में
सरल अन्नदाता
धन विहीन
मात्र सांत्वना पर जीने को मजबूर हो रहा है,
क्यूँ ईश्वर भी आज कितना क्रूर हो रहा है |

मानव जीवन अनमोल है मेरे भाई
निराशा के अंध कूप में मत गिरो
अधिकार तुम्हारा है इसे लेना होगा
अगर अन्नदाता नहीं जी सकता
भारत धरा पर
अधिकार नहीं किसी राजनेता का
जीने का इस वसुंधरा पर |

उठो उठो संघर्ष तुम्हे करना है,
आत्मबल दिखा
इस पाखंडी राजनीति का
निष्कर्ष तुम्हे करना है

क्या यही संस्कृति हमने पाई है
क्या दुखद स्थिति आयी है
विदेशी विक्रेता तो बेच पिज़्ज़ा

अरबों कमा रहे,
अन्न दाता दे रोटी
जान अपनी गँवा रहे,
तुम आर्य पुत्र हो आर्य संस्कृति पहचानो
झुको नहीं मरो नहीं, अपने बल को जानो
संधान करो ऐसा शर,
राजनीति, अर्थनीति, समाज नीति
इन सबसे बढ़कर आज की प्रचार नीति
तुम्हें दिलाये सम्मान तत्पर |

19. दामिनी की मृत्यु पर.

जिंदगी नही हारती
हारती है
हमारी अवधारणाएं
हारते हैं हम
आज हम हार गए,
अपने आदर्शों के मोल को
हार गए,
भारत की शुचिता की
धरोहर को हार गए
कुछ मृत्यु आनी जानी होती है
कुछ इतिहास बनाती हैं
कुछ भविष्य को
दिशा निर्देश दे जाती हैं
यह मौत,
मौत नहीं एक दिशा निर्देश है
याद रखो
ऐ देशवासियों
इस सहादत को
व्रत लो
न देखेंगे अब और अन्याय
इस पुनीत धरा पर
छुपे नर पशु को ढूँढ़ ढूँढ़

पशुविहीन करेंगे यहाँ पर

२९/१२/२०१२ दामिनी की मृत्यु पर

20. हिंदी दिवस

१४ सितम्बर आ रहा है,
हिदी-दिवस मनाएंगे,
कुछ सभाए बुलाई जाएँगी,
कुछ नेता गण आयेंगे,
साथ में आयेंगे,
सूट-बूट धारी अफसर गण,
भाषण होंगे, हिंदी गीत गायेंगे |

बोलेंगे वो,
हिंदी इज नेशनल लेंगवेज
वी शुड एडोप्ट ईट ,
फिर तालियाँ बजेंगी,
मजमा ख़त्म,

पहले माँ,बाबूजी थे,
फिर बदल कर,
मम्मी पापा हो गये,
अब सिकुड़ कर,

मम एंड पा हो गये,
पिता तो पुरे डेड हो गये
न जाने और आगे क्या होगा,

हिंदी बोलने वालो का और कितना इम्तिहाँ होगा,

शर्म क्यूँ आती है
निज भाषा बोलने में,
निज वेश-भूषा ओढ़ने में,
जब देश हुआ आजाद,
तब हिंदी नहीं थी इतनी बर्बाद,
ज्यों ज्यों चढ़ा जवानी का रंग,
हिंदी क्यूँ हो रही तंग,

कौन सा देश इतिहास में बतलाएं,
निज भाषा छोड़
उन्नति आयी हो जहां जता लायें |
शिक्षा-दीक्षा लगती
निज भाषा में शोभित,
निज भाषा उन्नति अहे,
सब उन्नति को मूल |

संस्कृत जननी है सब भाषाओँ की,
एक बट वृक्ष है,
हिंदी,तमिल,बंगला इत्यादि इत्यादि,
सब शाखाएं विशाल,
विश्व की जीवित सबसे पुरानी भाषा बेमिशाल,
अरे देव-धरा पर जन्म लेने का,
कुछ तो कर्ज चुकाओ
देव लिपि को तो ना ठुकराओ |

21. मानव स्वभाव

जब समय
पहाड़ हो जाता है,
काटते नहीं कटता
और
गगन उतर कर
मस्तक को छूने लग जाता है
एक विस्फोट होता है,
अंतःकरण की शिराओं में
शिराएँ जो मस्तिष्क से होते हुए

भावनाओं में प्रवाह करती है
शिराएँ इन्द्रधनुषी रंग लिये होती हैं
इसमें बहने वाली भावनाएं
इसमें बहने वाली कल्पनाएँ
शोणित नहीं
मनुष्यता का रंग लिए होती हैं
हाथ पाँव की शिराओं से बहते हुए
अरमान जब मस्तिष्क में पहुँचते हैं
तब तब मनुष्यता
हरे पीले काले लाल सब रंगों से
रंगी इन्द्रधनुष सी होती है नव
और होता है
गगन और माथे का टकराव
विष्फोटक,
घातक,
यही है मानव स्वभाव |

22. क्या यही मनुजता है

दर्द
जब बढ़ कर
सागर बन जाता है
तब
मैं बन जाता हूँ किनारा

बुलबुले सी जिंदगी

बढ़ कर सह लेता हूँ
आते ज्वार को
जाते भाटे को
और
समेट लेता हूँ अंतस में
सभी आती दूषित

गंदगियों को
जो न जाने कहाँ कहाँ से
बह कर चली आती है
मुझे मैला करने को,
दर्द का सागर
बादलों की गड़गड़ाहट में
और भी
भयावह हो जाता है
तब
सिमट कर किनारा
मुझसे निकल कर
सिकुड़ जाता है
और उन नदियों में समां जाता है
जो इठलाती उमड़ती घुमड़ती
मदमाती
लिए साथ तमाम
द्वेष मोह की कलुषता
उस दर्द के सागर में
अंतर्मुखी हो जाती है
सोचता हूँ
सागर कैसे सह लेता है
सब कुछ
क्यों उसमे कभी
बाढ़ नहीं आती
कभी क्यों वह
अपनी सीमाओं का
अतिक्रमण नहीं करता
क्या इसी को
इंसानियत कहते हैं
क्या यही मनुजता है |

23. आज का भारत

अतीत की धरोहर
कल्पनाओं का प्रतिक
भारत,
वेद की ऋचाओं सा पवित्र
राम कृष्ण का चरित्र
गीता ज्ञान का वैभव
दर्शाता
भारत,
नौनिहालों का प्रगति-पथ
युवाओं का स्वप्न
भारत,
अब कैसा है
वर्तमान से असंतुष्ट
भविष्य के लिए चिंतित
भारत,
कर्णधारकों की महत्वाकांक्षा
आशाओं की मृगतृष्णा
से ग्रसित
भारत,
निर्देश विहीन
दिशा हीन,
चाटुकारिता
निज स्वार्थ साधना
यही है आज का
भारत ||

24. दैन्यता

अस्त-ध्वस्त-त्रस्त
काल के कपाल पर पस्त
दैनन्दिनी
मात्र रोटी व् श्रम
जीविकोपार्जन का क्रम
आक्रान्त
फिर भी शांत
संसार सागर में
लहरों के हवाले
भाग्य विधाता
अविधाता
आँखें अश्रुपूरित
हृदय
फिर भी पाषाण सा दृढ़
धैर्य और हिम्मत की प्रतिमूर्ति
दरिद्रता, दैन्यता, क्षुदा
एक त्रासदी
क्या होगी कभी क्षतिपूर्ति |

25. नव बसंत सु-स्वागतम

नव-बसंत सु-स्वागतम
सु-स्वागतम नव बसंत
काट पतझड़ का अवसाद
नव पल्लव
नव किसलय
नव नभ पर नव विहग
नव हरितिमा दृष्टी पर्यंत
सु स्वागतम नव बसंत

हर्षित तन-हर्षित मन
चंचल चितवन
आल्हादित तन
नव शाखा -नव गुंजन
नव जीवन स्पंदित उपवन
नव बसंत सु-स्वागतम

नव कुसुमाभिनंदन
झंकृत अंतस
स्पर्श नूतन
अनुपम चाह सघन
नव ज्योति- नव स्फूर्ति आगमन
नव बसंत सु-स्वागतम
जीवन लक्ष्य नवीन
उच्छलित मन प्रवीण
प्रफुल्लित मन
नवोत्कर्ष छांव गहन
नव बसंत सु-स्वागतम|

26. **पगडण्डीयां**

स्वयं को चलते रहने का
आभास दिलाती पगडंडियाँ,
अपने को अपने के पास
पहुँचाने का फ़र्ज़ निभाती है पगडंडियाँ ,
पेड़ के झुरमुटों को काट काट बनी पगडण्डीयां,
उबड़ खाबड़ घुमावदार सी,
अपने लक्ष्य पर पहुंचती है पगडंडियाँ,
अपार सुख को पाती सी
सारगर्भित अनुभव को दर्शाती है पगडंडियाँ |

पगडण्डीयां अक्सर निरंतर
चलने वालों के पदचिन्ह से बनती हैं,
जिंदगी की राह भी पगडण्डी जैसी ही बनी हुई है,
चलते रहो चलते रहो
राह बन ही जाएगी |
जिंदगी की पगडण्डी होती है,
लक्ष्य पाने के लिए बेकल |
निरंतर संघर्ष-रत,
ऊँची-नीची राहो में सतत चालित,

कांटो से त्रस्त,
प्रेयषी की चाह में व्यस्त,
अंतिम पड़ाव को आश्वस्त |

27. शंखनाद

आत्मसात अनुभूतियाँ,
शिराओं का उग्र लहू,
दो परिस्थितियां,
सहनशक्ति की परिसीमा
और आक्रोश का उत्सर्जन,
बीच की रेखा अति सीमित,
भारतीय मानस अहिंसा का पुजारी,
धर्महानी पर कर्मयोग का उपासक,
राष्ट्र कर्णधार
जन आक्रोश जाग रहा है,
प्रारंभ का शंखनाद सुना आपने,
राजनीति के गलियारों की हलचल देखी आपने
जब जन आक्रोश विस्फोटित होता है,
जब सामान्य मानव उद्घोषित होता है,
एक दावानल भड़कती है,
एक भूचाल स्पंदित होता है,
राजनीति के आधारस्तंभ उखड़ जाते हैं,
तो सुनो,
सावधान हो जाओ,
एक अलख जगाने जन जाग उठा है
अब अति समाप्त हो,
रामराज्य की कल्पना प्राप्त हो||

===दिनांक १०.०३.२०१४

28. कब नीलकंठ बन पुनः आवोगे

शिव कब
कालकूट के प्रभाव से सत्संग होंगे
कब आप भंग की तरंग से अनंग होंगे
सस्मित देश की अन्तः ज्वाल शांत करने को
भारत विशाल के क्लेश कराल धुम्रांत करने को
खोल तृतीय चक्षु, कर मदन भस्मसात
शिव कब पुनः प्रकट अंतरंग होंगे |

बंट चुके हम टुकड़ों में,
जाति, उपजाति के लफड़ों में
हिन्दू मुस्लिम के झगड़ों में
सत्यम शिवम् सुन्दरम का पाठ पढ़ाने को'
वसुधैव कुटुम्बकम बताने को
आप कब सत्संग करने पधारोगे|

भ्रष्टाचार, अनाचार से ग्रसित
काम लोलुपता से दूषित
छोड़ अपनी संस्कृति
दूषित हुई मति
कर डमरू नाद
ॐ का ज्ञान सुनाने को
हर्षित हर जन कराने को
गरल कुत्सित विचारों का करने पान
कब नीलकंठ बन पुनः आवोगे ||

29. परिवर्तन मुझे खुद में ही लाना होगा

भाव के अतिरेक में,
बह रहा अशांत मन मेरा,
देख उसे आहत होता तन मेरा,
चोटे कितनी सहेगा वो जर्जर
देख रहा,
चौसठ वर्ष का वृद्ध लंगड़ाता चल रहा
अत्याचार,
भ्रष्टाचार से ग्रसित
चार-चार होते उसके वस्त्र अव्यवस्थित,
दर्द अतीत का दबाये है वो सोच रहा
कहां गयी वो परम्पराएँ,

बुलबुले सी जिंदगी

अतीत की मर्यादित कथाएं
पुरषोत्तम राम की मर्यादा
कृष्ण का कर्मयोग मनन
नानक का चिंतन
बुद्ध के वचन
महावीर की अहिंसा
गीता का ज्ञान
शहीदों का बलिदान
शिवा की शान
मीरा की तान
पुरखो का अभिमान
सुरदास के भाव
बिहारी के दोहों की शक्ति
कबीर की पंक्ति,
तुलसी की भक्ति

मेरे शैशव में तो देश प्रेम महान था
युवा हुआ तो कर रहा निर्माण था
इस अवस्था में क्यूँ घात है
क्यों न उनको पश्चाताप है,
मेरे बच्चे मुझसे क्यूँ बिछड़ रहे
भ्रस्टाचार और अनाचार में क्यूँ बिगड़ है
चिकित्सक कौन ऐसा आयेगा
दूर बिमारिया कर जायेगा

क्या अपाहिज शरीर को फिर से स्वस्थ कर पायेगा
लड़ना मुझको ही है अपनी बिमारियों से
गर संतान मेरी दूषित हो रही
सुधारना मुझे ही है उन्हें प्यार से
न सुधरे तो सुधारेंगे मार से
परिवर्तन मुझे खुद में ही लाना होगा
मै भारत हूँ, भारत कहलाना होगा
परिवर्तन जगत तो है गतिशील
प्रतिदिन परिवर्तनशील
बाल्यकाल से निर्वाण तक
हर क्षण हर पल
बदलते उद्देश्य
बदलते रहते ध्येय
सफलताओं एवं असफलताओं
में तत्पर
परन्तु अंततः प्रगति की ओर अग्रसर

बुलबुले सी जिंदगी

बदलना ही नियति है,
परिवर्तन को करो स्वीकार हंसकर
अन्यथा अवसाद से ग्रसित मन होगा
मलिन आनन् होगा
सूर्य वही रहता
चन्द्र भी वही
परन्तु बदल बदल हर दिन देते

एक नयी ताज़गी
एक नया आयाम
शीतलता,उष्णता का
नित नया परिणाम
निशा उदीप्त होती राकागण की प्रभा से
बदलती स्थिति तारों की
कभी आभा कम नहीं करती
बदलती स्थिति सितारों की
कभी कर्मशीलता कम नही करती

जल की बूंदे
गिरते हुए दिखती हैं
ओस की बूंदे
गिरते हुए नही दिखती
बल्कि
उषा की प्रथम किरणों के साथ
अहसास होती हैं,
आँखों को शीतलता देती हैं,
क्यूंकि ओस की बूंदों में
परिवर्तन निहित है,
प्रकृति से परावर्तित
एक क्रिया बिम्बित है,

परिवर्तन जैसे जीवन
गतिशील बनाता है,
परिवर्तन ही जीवन
अनुभवशील बनाता है
परिवर्तन से क्या घबड़ाना'
परिवर्तन को तो है
दिल से लगाना ||

30. वन्देमातरम

राष्ट्र चेतन उद्घोष अनुपम
नव दर्शन, नव भाव, संकल्प सर्वोत्तम
नव उजास, नव कल्पनाएँ ,नव मृदु भाषितम
वन्देमातरम वन्देमातरम |

विकट मार्ग में सरित प्रवाह है
धाराएं मोड़नी होंगी अनुरूप
उठो उठो भारत के नर नाहर
उठो देश ऐसा बनायेंगे
वैदिक स्वाभिमान जगायेंगे
संस्कार की ज्योति से अंतस
आलोकित हो सुन्दरम
वन्देमातरम वन्देमातरम |

परिमार्जित स्वध्याय से आवेशित
समस्त राष्ट्र हो प्रकाशितम
हरित पल्लवित वसुंधरा
शस्य श्यामला मातृभूमि मंगलम
वन्देमातरम वन्देमातरम |

प्रेरणा अभिलाषित हो सर्वहित
कामना हो मन आर्जव
प्रत्येक नव युवा सृजक बनायेंगे
विग्रह निश्चय लें क्षोभरहित
शांत सोच से काल निर्णय लायेंगे
वन्देमातरम वन्देमातम गायेंगे |

31. ध्वज वंदना

हे मेरे राष्ट्रध्वज
हे मेरे स्वाभिमान
अशोक के
स्वाभिमान ज्ञान
प्रगति-सादगी- अस्मिता
प्रतीक
शत कोटि जन का आदेश
नमन मेरे भारत देश
तू एकता का प्रतीक
सींच जिसे
पटेल-अटल-लाल बहादुर ने
बनाया वट वृक्ष एक विशाल
छांव में जिसकी निश्चित बैठ
उन्नत हुआ हमारा भाल |

32. गणतंत्र दिवस

हे मेरे गणतंत्र
हे मेरे स्वाभिमान
विश्व के कीर्तिमान
शत कोटि जन का आदेश
नमन मेरे भारत देश
विभिन्नता में
तू एकता का प्रतीक
जन मानस की भावनाओं का
उत्तराधिकारी सटीक
सींचा जिसे गांधी सुभाष
पटेल अटल लाल बहादुर ने
बनाया वट वृक्ष एक विशाल
छांव में जिसकी निश्चित बैठ
उन्नत हुआ हमारा भाल |

जड़ हो निज स्वार्थ के
दस्यु ने लूटा क्यूँ
जनतंत्र घर तंत्र बन रहा
अब मौन छूटा क्यूँ

दिशाएं स्तब्ध हैं
हवाओं का रुख अंगार है
जन आक्रोश था,
व्यभिचार है भ्रष्टाचार है
त्रासदी इतनी थी कि
जनतंत्र समूचा हिल गया
बगियाँ कामना लिए खड़ी
कमल एक खिल गया
सुरभित पुष्प से कानन हम महकायेंगे
विश्व प्यारा सर्वोत्तम गणतंत्र हम बनायेंगे ।।

33. **एकाकीपन**

मैंने
समंदर को रौंद डाला
पैरों तले
यह सोच कर कि
विगत स्मृतियाँ
कर देंगी दूर
एकाकीपन को
पर क्या
जल की दो चार बूँदें
धधकते मरुस्थल की रेत को
ठंडक पहुंचा सकी है,

बैठे बैठे
समय बीतता जाता है
एकाकी मन व्याकुल हो उठता है
प्रतीक्षा रहती है
बस
एक सौम्य नीरव

शांति की
जो आकर मुझे

अपनी गोद में समा ले |

34. जीवन की मरू-मरीचिका

आकांक्षाओं का दहन करती
जीवन की मरू-मरीचिका,
इस वयसंधि में
किंकर्तव्यविमूढ़ बन ढूँढूं
जीवन विभीषिका
विगत स्मृतियों का विचार
कुछ खट्टा कुछ मीठा
अवगत परिस्थितियों से
दूरस्थ स्थित अंध कोह
चाह
एक दीप शिखा की लौ
परन्तु
तरल तिमिर में उपलब्ध
मात्र
चिलिमिलिका प्रभा
अंतरिक्ष में ज्योर्तिमान
प्रकृति शक्ति चिन्ह सा दृढ़
अग्रसर
अग्निपथ पर भी
परिवर्तन की अभिलाषा
अन्तर्निहित प्रवाहित भय
तिलांजलि दे इनको
शैल श्रृंग सा सुदृढ़
समस्त अवरोधों का
आचमन कर
रहूँगा
अग्रसर अग्रसर
यही साधना
यही आराधना ||

35. जिजीविषाम:

एक दिन
मैंने पूछा जिंदगी से
क्यूँ है इतनी उदास
बिखरे बिखरे सपने

बुलबुले सी जिंदगी

अनबुझी सी प्यास,
जिंदगी की राह
क्यूँ है इतनी कठिन
बिछे हुए है शूल ही शूल
बितते है दिन
गिन गिन,
अनवरत अपनों का घात
हृदय संकुचित भय अज्ञात,
आततायियों का आतंक
जीवन आक्रांत
मानवीय मूल्य क्षीण नितांत,
अमर बेल सी बढ़ती महंगाई
त्रस्त जन जीवन
अभ्यस्त मंत्री गन,

जिंदगी ने एक शब्द
में ही दिया उत्तर
हमें किया अनुत्तर जिंदगी
दो दिनों का खेल
जियो भरपूर
प्रतिपल, प्रति क्षण
जिजीविषाम: ||

36. **पिंजड़ा बहुत जर्जर हो चूका**,

एक दिवस
प्रातः
लालिमा आने के पूर्व
अकस्मात मेरे हृदय ने
मुझे थपथपाया
और
दी दस्तक जोरों से
कहा
इतने वर्षों मै चुप रहा

अब मौन तोड़ता हूँ
गर्मी झुलसा रही है,
वर्षा का अब कोई अंदेशा नहीं,
पिंजड़ा बहुत जर्जर हो चूका,
आखिर पिंजड़ा ही तो है,
इस नारकीय अंधकार में
मुझे क्यूँ बंद कर रखे हो
मै क्यूँ हूँ अपराधी
एक एक दिन गिन रहा हूँ
तोड़ पिंजड़ा
कर मुझे स्वतंत्र
मै पंख लगा उड़ना चाहता हूँ
मै स्वतंत्र होना चाहता हूँ||

37. शहीदे आज़म

ऐ शहीदे आज़म तुझे मेरा सलाम
हर नौजवान की धड़कन तुम
सब की जुबान पर तेरा नाम
ऐ शहीदे आज़म तुझे मेरा सलाम

राजनीति के गंदे खेल से तू भी न बचा
न किसी ने दी श्रद्धांजलि
न किसी ने पढ़ा तेरा कलाम
ऐ शहीदे आज़म तुझे मेरा सलाम

जब खून जिगर का देश पर था न्योछावर
तब तुम ही ने दिया इन्कलाब का नारा
नारा तेरा जन गण सा जिसका हर दिल धाम
ऐ शहीदे आज़म तुझे मेरा सलाम

जिस आज़ादी को तुने सपने में संजोया
पाकर हमने किया क्या ? आ देख
भ्रष्टाचार, अनाचार, से किया बदनाम
ऐ शहीदे आज़म तुझे मेरा सलाम

लहू मत खौलाना फिर से
गर्माहट सारी हो चुकी अब खतम
बेशर्मी ने किया अब काम तमाम
ऐ शहीदे आज़म तुझे मेरा सलाम

इल्तिजा इतनी बस फिर से तू आ

इन्कलाब जगा खुनी लूटेरों को मार गिरा
पहले थे विदेशी अब तो है यह अपनों का काम
ऐ शहीदे आज़म तुझे मेरा सलाम ||

38. कहानी मिट्टी और कुम्हार की

यह कहानी है
मिट्टी और कुम्हार की
कुम्हार मिट्टी रोंद रोंद
शक्ल कुछ देने की सोच रहा था
क्या बनाऊं, न बनाऊं
इस उधेड़ बुन में खो रहा था

सामने साधुओं का टोला जा रहा था एक
मस्त अपनी धुन में धुंए सा बेफिक्र
बेफिक्र दुनिया से
अपने में दुनिया समेट
बैठ धुनी रमाई
खोजने लगे चिलम अपनी
मिली न चिलम
कुम्हार ने सोचा बनालूं
चिलम
पुण्य पा जाऊँगा
साधुओं के काम आ जाऊँगा

मिट्टी ने कहा कुम्हार से
क्यूँ मुझे बना रहे
आग में मुझे जला रहे
तड़पन मेरी बढ़ा रहे
लोग मुझमे भर कर आग फूकेंगे
सीना अपना और
जज्बात मेरे जला जला चुकेंगे

तभी एक नारी
अस्त-व्यस्त-पस्त सी
नज़रें अलमस्त सी
सूखे अधरों पर जिव्हा फेरती
प्यास से प्यासित

सुराही की चाह में
आयी कुम्हार की राह में

मिट्टी ने कहा
कुम्हार से
रे कुम्हार
बनादे मुझे सुराही तू तो
शीतल जल भर
शीतलता पाउंगी
औरों को भी शीतल कर
खुद भी शीतल हो जाउंगी

तेरा तो क्या
तुमने तो बस
बदलना आकार है
बदलेगा मेरा संसार है

चिलम से जल कर
औरों को जलाऊंगी
न मिलेगी शांति
न मिलेगी ठंडक
सुराही बनी अगर
निज तन को भी
करुँगी शांत
अन्य को भी करुँगी कांत ||

39. वक्त जर्जर है

वक्त जर्जर है
अस्तित्व के विकार सा
दर्द जिंदगी का
निकलते गुबार सा
निर्बाधता श्रोत
जीवन दर्शन की होती जभी
हौसलें, सहुलतें, हिदायतें, उसूल बेमानी होते हैं
जिंदगी हिस्सों हिस्सों में बंटी सी प्रतीत होती है
जज्बात ह्रदयंगम हो
आत्मसात होते तभी

हर हिस्सा
एक वाटर टाइट कम्पार्टमेंट होता है
किसी को दूसरे से न कोई चाह

बुलबुले सी जिंदगी

किसी को न कोई परवाह
एक सन्नाटा
एक खामोशी
टूटते विकल्पों को कचोटती है
व्हील चयेर की सी जिंदगी भी एक जिंदगी होती है
आश्रित, मोहताज़, हर पल उड़ने की आशा
परन्तु निराशा,
एक तड़पन
उत्कंठा एवं एकाकीपन

इन्टरनेट युग में स्थितियां
कल्पनाओं से तेज़ उड़ान भरती हैं
चोबीस घंटे सिमट कर
छोटे होते जा रहे हैं
अपनो के लिए
अपनों का समय निकलना दुष्कर है
हालात के प्रवाह में छोड़ देना ही श्रेयस्कर है

बंद कमरे में
आती सूरज की किरणे
अब नही सुहाती है
अंधेरों से एक
अजीब सा प्रेम हो गया है
भारी फेफड़ों में जैसे कोई
सांस अटक जाती है
इर्द गिर्द की चहलकदमी भी
कोतुहल मचाती है
बेखौफ हूँ अब,
अब न कोई डर है न कोई शिकवा है
जिंदगी का,
जीने का सलीका तो अभी अभी सीखा है

झाँक अंतस की गहराई में देखा
विगत स्मृतियों की छांव में
वेदना की आह को देखा
बेबसी को परखा,
लाचारी को देखा
आत्म-शक्ति,
इच्छा शक्ति,
आत्म-बल प्रणेता हैं
रबर की सीमा होती है

टूट जाता है अतिक्रमण से,
जिजीविषा टूटने नहीं देती है
एक वही तो शक्ति है
जो हर कदम
साथ देती है साथ देती है ||

40. झिर्रियाँ

अँधेरे बंद कमरे में,
झिर्रियों से आती सूर्य किरणें
एक वृताकार रेखा बनाती हुई,
सामने की दीवार पर आवृत बनाती है
रेखा में अनगिनत धुल कण नाचते से दीखते हैं
मानो जीवन एक रश्मिरेखा हो
और धूलकण
जीवन की विसंगतियां
ये रश्मि किरणे
मात्र एक बिंदु को ही उजागर करती हैं
ह्रदय के अँधेरे कमरे को
उजास करने को तो
एक दीप जलाना होगा
ज्ञान का प्रदीप
विश्वास का दीप
प्रेम का दीप
जो समस्त बुराईयों को
समाप्त कर
रोशन करें |

41. पर्वत बालाएं

बचपन में देखता था,
एक लहराती बलखाती सापिन सी
पगडण्डी जाती हुई
ऊपर दलमा की पहाड़ी पर
जाते थे उसके साथ
उन आदिवासियों के
जज्बात,
जिजीविषा के सौगात,
शैल शिखर पर
बसी वो जनजाति
आधुनिकता से दूर
अपनी पहचान की मोहताज
अपने अस्तित्व को संवारती
चींटियों मकोडो को
खाने को मजबूर,
तोड़ कर केंदु के पत्ते
कुसुम के फल चिरौंजी के दाने
गुजर बसर को
वही किस्से पुराने.
पर्वत बालाएं कर्मठ, मेहनतकश
सर पर ढोती
मीलों लकड़ी के गट्ठर
शायद एक दिन की
रोटी मिल जाय|

42. जीवन उद्देश्य

कब क्षितिज पर
लालिमा का अंगार होगा
कब वसुंधरा पर
पोषित हरित श्रृंगार होगा
कब पुनः दिगंत अम्बर अपार होगा
कब पुनः सुखमय संसार होगा |
कब कम होगी अंतस की वेदना
कब मनुज को मनुज से प्यार होगा
कब हर्षित मेरा संसार होगा |

माना सागर मंथन से
मिला एक मात्र पियूष पात्र
मोहिनी बने नारायण को
पर सागर के आँचल में

गरल भी था
पिया जिसे शम्भू ने
विश्व कष्ट हारण को |

शिव नाम
उसका ही होता
जिसने भी किया कर्म निष्काम
आशीर्वाद मिलता
दीन-दुखियों का
संसार में यह ही सबसे बड़ा सत्काम |

पर अभी तो घटायें काली छाई हुई हैं
मार्ग भी है अति दुर्गम
लौ दीपक की टिमटिमाई हुई है
भूलभुलैया में गुम
हृदय वर्जनाएं चरमराई हुई है |

जीवन के अंतराल में
कुछ क्षण ऐसे भी आते हैं
समूचे वृत को मर्माहत कर जाते हैं |

गतिशील समय यह
भविष्य को निर्धारित कर जाता है
विश्व को दे एक दिशा
नूतन पथ प्रदर्शित कर जाता है |

पता नहीं कब क्षितिज पर
लालिमा का अंगार होगा
कब पुनः दिगंत अम्बर अपार होगा
कब पुनः सुखमय संसार होगा |

43. अंतस कथा

कामना
कुलदेवी से,
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि,
माँ ने दिया सब
मैंने पाया सब,

अपनो का प्यार
मिला न मिला
पर आघात अवश्य मिला,
अंगुली थामने को
एक मिला
जंहा प्यार मिला
मान मिला,

मानसिक उत्थान मिला,
सामाजिक स्थान मिला

लौट आया आत्म-बल,
रोग को पछाड़ कर,
लौट आया जीवन संबल,
खुशियाँ मिली फुल खिले,
तो कुछ अद्भुत अनुभव भी मिले,

नादान जान गले लगाया जिसे,
अपनो से ज्यादा किया विश्वास,
पलको पर बिछाया जिसे,
ख्वाबों में लाया जिसे
लुट चूका था जो
फिर से बसाया जिसे,
न जाने क्यूँ,
ऐसी घात कर गया,
विश्वास को छार-छार कर गया,
जिसे हमने नव-जीवन दिया,
वही जीवन पर वार कर गया,
बर्बाद कर गया,

अब गगन भी धरा चूमने लगा है,
नयी राह पर
तलाश नयी मंजिलें,
ये कारवां निकलने लगा है,
छोड़ उन अंधियारे क्षणों को,
इस खाली झोली में
सौगात मिल रही है
देख रहा दूर दीप-रश्मियाँ
भविष्य की सुनहरी अभिव्यक्तियाँ ||

44. काली घटा सा अँधियारा

काली घटा सा अँधियारा
छा गया जीवन में,
पल-पल क्यूँ घुट रहा
विचारों के सुनें पन में

सजा-सजा संवारा था
जीवन की इस बगिया को
सींच सींच लहू का
पौध नयी उगाई थी,
भांति भांति के पुष्प खिलाये
देख देख हर्षाये
मन होता था अति प्रफुल्लित
उपवन सारा पुष्प सुरुभी से था सुरभित
पवन झकोरे चलते थे
बगिया करती थी आनन्दित

अंधियारी रातों में
यौवन के जजबातों में
फुल मेरा मुझसे रूठ गया
बगिया की शाखा से टूट गया
जा पहुंचा अंधी गलियों में
अपनी अलग दुनिया की रंगरलियों में
रह गया शूल अब डाली पर
चुभन उसकी रुलाती है
फुल तो अब भी मुझे रहा कोश
मै ही माली था
मेरा ही उपवन था
मेरा ही है दोष |

45. खिड़कियाँ

खिड़कियाँ

एक प्रतिबन्ध होती हैं
खुल जाती ही हैं
कितनी भी मजबूती से बंद करो,
दीवार की तरह
कदापि नही हो सकती
आत्मसात कर लेती हैं
समस्त प्रदुषण
समस्त कल्मष
समस्त वर्जनाएं
देखती रहती हैं
खुली आँखों से
आते जाते मार्ग को,
आते जाते इंसान को
मौन ,अति मौन |

46. अवलंबन

गुजरता हर दिवस
एक अनुभव देता है,
प्रश्नवाचक चिन्ह सा,
कुछ कटु, कुछ मधुर,
आत्मसात कर अनुभवों को
एक अमरलता सी सजाई जाती है
हर चढ़ान पर बेल पर
एक डंडी सी लगाईं जाती है |

अवलंबन जीवन में आवश्यक है,
विवाह होता है जीवन साथी पाने के लिए
एक दुसरे के अवलंबन बनने के लिए,
पुत्र पुत्री समाज सब
एक दूजे के सहारा हैं
अवलंबन बिन जीवन
किसी ने भी नही गुजारा है |

समय की चाशनी में
अनुभव परिपक्व होते हैं

परन्तु
कभी तीक्ष्ण तो कभी क्षीण होते हैं
सीख ले ले जो वह सिकंदर होता है,
न सीखे वह कलंदर होता है |

47. जीवन के वर्ष पर वर्ष

जीवन के वर्ष पर वर्ष
बीतते गए,
अवलोकन किया विगत पर
क्या पाया क्या खोया
जीवन की आपाधापी में
लक्ष्य विमुख हो कहाँ डुबोया |

अभिव्यन्जनाएं, वर्जनाएं,
समस्त जीवन को
नचा कर रख देती हैं,
क्यूंकि लोक लाज का भय
उसे ही ज्यादा होता है
जो भोग में कम लोक में ज्यादा होता है |

व्यतीत हुआ एक एक पल
६१ वर्ष के अनुभव को सिलता
अनुभव एवं मोह की कसौटी पर घिसता
आत्म संज्ञान को बाधित करता है,
चरवेती चरवेती धर्मम
चरवेती चरवेती कर्मम
यो वे भूमा तत सुखम ||

१४/७/२०१३

48. कोहरे से लिपटी जिंदगी

घने कोहरे से लिपटी जिंदगी को
कुछ मुस्कान दे सकूँ

बुलबुले सी जिंदगी

सोच कर यह
चंद कदम आगे बढ़ाये
खिली खिली धूप को पाने को

दर्द इतना गहरा है
बरसों से पाल रहा हूँ
आदत सी हो गयी है
सहेज कर रखा है
दिल में शुकून लाने को

नागफनी के कांटे
मुलायम से लगने लगे
जब अन्दर के शूल
बाहर को उभर के आने लगे
कोशिशें बहुत की अन्दर अन्दर दबाने को

जिंदगी को इस हालात में
सौंप दिया लहरों के हवाले
ये तो हवा के रुख पर है
इस पार ले जाये या जाये डुबाने को

घने कोहरे से लिपटी जिंदगी को
कुछ मुस्कान दे सकूँ
सोच कर यह
चंद कदम आगे बढ़ाये
खिली खिली धूप को पाने को ||

49. जन्म दिवस की पूर्व संध्या पर

अतिशय व्यथित था
पूर्वाग्रह से कुंठित था |
भेद कर अतीत को
जीवन के उत्कर्ष
और
पतन को,

समीक्षक बना निहार रहा था
भुत को भूल भविष्य को संवार रहा था |
उत्तरार्ध
जीवन का पहुँच चूका,
समय अब लग रहा रुका रुका,
पूर्वार्ध में था जीवन
अंध दौड़ में रंजित
थका थका |
शारीरिक व्यवस्थाओं का व्यवधान
अवचेतन पर द्वेत उत्थान,
यही निष्कर्ष रह गया
अहेतुकी कृपा का प्राथी
अंतस से प्रभु मांग रहा
शांति ही परम लक्ष्य है जान रहा |

१३/७/२०१५

50. परछाई

एक दिन
पूछा मैंने
अपनी परछाई से
कब तक साथ निभाओगी
छोड़ एक दिन तुम भी चली जाओगी
वैसे भी तुम्हारी फितरत
काबिले विश्वास नही है
तुम खाली उजालों की साथी हो,
अँधेरा आते ही साथ छोड़ जाती हो,

जब जब सर पर कष्ट आता है,
प्रचंड सूर्य अपना तेज़ बिखराता है
तुम छोटी हो दुबक जाती हो
सुहाने मौसम में तुम
चौड़ी लम्बी हो अकड़ दिखाती हो,

ऐ मेरे दोस्त

तुम मेरे हमसाया बनते हो
पर अँधेरे में
प्रचंड धुप में
साथ न छोड़ना
कम से कम तुम
नाम मित्रता का न लजाना तुम |

51. संबंधों की प्रगाढ़ता (बेटी की विदाई पर)

प्रगाढ़ता संबंधों की
होती नही वरीयता पर आश्रित
तत्क्षण बदलते चिटकते रिश्ते
भावनाओं से नही होते निष्पादित
कभी अपने थे पल में हो गए पराये
और हो गए पराये अपनों से प्यारे अपने
पाश्चात्य प्रभावी अवश्य है
परन्तु संस्कारों की मूलावस्था
जड़ है चेतन नही
बेटी बेटी ही होती है
धन पराया
विदा होती है
लगता है शल्य क्रिया से
हृदय दो हिस्सों में बाँट दिया गया है
एक लरजता है, एक आह भरता है
एक दुलार करता है, एक सुप्त अश्रु बहाता है
एक ढेरो खुशियों के अरमान करता है,
एक शांत, गंभीर, शून्य निहारता है
विदाई:
यह एक प्रथा है
विचित्र कथा है
बेटी की विदाई एक बड़ी व्यथा है ||

52. ब्रह्म-ज्योति से मिलन को

सामान्य दशा में जब तक देह है तब तक अस्तित्व है देह के पञ्च तत्व में विलय के पश्चात उसका अस्तित्व नही रह जाता, परन्तु वेदों, उपनिषद एवं श्रीमद भागवतम में आत्मा को सर्वोपरि माना गया है, यह अजर-अमर-अविनाशी है, आपकी आत्मा जैसे कर्म को पीछे छोड़ जायेगी वही अनादि काल तक उसके अस्तित्व को दर्शाएंगे |

जल में स्पंदन
करता तरंगों का सृजन
आत्मा होती सरिता सम
निर्मल मृदु मृदु अनवरत

सरिता का मिलन-समर्पण सागर से
अंतिम बंध है,

ज्यूँ अबाध जीवन मलय की गति
उपवन की सुरभित सुगंध है,
उर तो शांत जलाशय
क्यों है तरंगित
कामना की भावना से है अस्थिर
आशा की कौन सी अभिलाषा
कर गयी आत्म-मंथन से परिचित

अंतर्मन का आत्मा से मिलन
समकालीन जीवन व्यवस्था है
मन एवं तन नही आधार अस्तित्व के
अस्तित्व तो स्थिर चेतन आत्मा की अवस्था है
शक्ति-रूप,ज्ञान-रूप, आनंद-रूप आत्मा
अहैतुक, भौतिक गुणों से परे होती आत्मा,
तन के रथ पर शोभित
चंचल मन को संचालित करती रथवान सी आत्मा,

आत्मा होती अंतस प्रकाश मानव की
चिर परिचित प्राणों के स्पंदन की
अपने ही सुख से चिर चंचल मन की
शांत उर सरोवर की विचलित आत्मा,
परमात्मा-रूपी सागर में विलय को आतुर
जीवन सरिता आत्मा
मनुज है असत्य
मानव अस्तित्व है ब्रह्म
ब्रह्म-ज्योति से मिलन को व्याकुल आत्मा ||

53. मौन

दशरथ नही चाहते थे
राम वनवास
राम नही चाहते थे
सीता की अग्नि परीक्षा
लक्ष्मण नही चाहते थे
सीता गमन
फिर भी सब कुछ हुआ

नियति का चक्र था
या
मौन का दुष्परिणाम
जब
मन न चाह कर भी मौन
रहा जाता है तो
नियति
दुष्परिणाम में परिवर्तित हो जाती है
और
भविष्य सदा
विडम्बना पर रोता है|

54. पगडंडियाँ बचपन से

ये पगडंडियाँ
चढ़ती है
टेढ़ी मेढ़ी सी
उस पहाड़ी की ओर
और उतर जाती हैं सीधे
अतीत के अंतराल को छोड़ते
अंतस की गहराइयों में
चीरती हुई जंगल जलेबी के पेड़ों को
जहाँ है एक नैसर्गिक सौन्दर्य
मिलन स्वर्णरेखा एवं खरकई का
पर अब नही रहा वह प्राकृतिक दृश्य
जहां लगता था कभी
मेला टुसू पर्व का
ऊपर निचे जाते लकड़ी के झूले
चाट पकौड़े के खोमचे
लगती थी ढेर सारी दुकानें
अब वहाँ चार लेन की सड़क हो गयी है
उसके साथ हो गया है कोंक्रीट का जंगल
आती जाती गाड़ियों का प्रदुषण
आधुनिकरण में खो गया
वह सौन्दर्य
और साथ ही खो गया है
वह पचास साल पुराना बचपन
आज भी बचपन बुलाता है

बार बार जाकर उन पगडंडियों को
निचे खिंच लाने का
प्रयत्न करता है |

55. रचना कृति सृजन

सृष्टि का सृजन
प्रभु की अद्भुत रचना
अभिव्यक्ति सामर्थ्य चिंतन की
अभ्यंतर कवि की
अभ्यर्थना मानस रवि की,
अस्तित्व की सोच
अस्तित्व का मार्ग
सकारात्मक
कृति स्वयम की
कीर्ति कृति की
कृति नैसर्गिक सौम्य हो
उच्च आदर्श हो
सृष्टि का सृजन अमर हो
अमर हो |

56. स्थित प्रज्ञ तो नहीं

सुन्दर पाखियों का चहचहाना
कितना सुन्दर लगता है,
कौन जानता है
उनके अन्दर की पीड़ा
पिंजड़ों से नही
खुले से डर लगता है
अक्सर............
कैद परिंदे की तो दयनीयता तय है,
उन्मुक्त गगन में उड़ने वाले
तुझे शिकारी का क्यूँ भय है|

स्थित प्रज्ञ तो नही हूँ,
पर जीवन में
चेतनता चाहता हूँ|

स्मृति भ्रम का निष्पादन कर
एकाग्रता मांगता हूँ|
मेरी कामना
कोई अतिशियोक्ति तो नही,
मेरी कामना
मेरे अंतस की पुकार है
स्थिरता ही चाहता हूँ|

जीवन संग्राम में
समर करते करते करते
थक सा गया हूँ
अब शांत चित अवस्था ही तो मांगता हूँ|

जय पराजय के द्वन्द में,

ऊंचाई नीचाई पर झूलता
यह मानव देह
मंदिर के घंटे सा झूल रहा है,
स्वर निनाद इतना तीव्र है की
अंतरात्मा तक झकझोर जाती है,
नाद वस्तुतः गाम्भीर्य का प्रतिक है,
गंभीरता एवं शांति का वरण हो
बस इतना ही तो चाहता हूँ|

अब मात्र सरलता का
मार्ग चल
स्थावर जंगम का विवाद छोड़
सचेतनता ही तो चाहता हूँ, |

57. रुष्ट हो गया भगवान

भगवान् मेरा
मुझसे रूठ कर न जाने
कहा खो गया
मै
ढूंढ रहा उसे
सागर किनारों के
छिछले जल में
तैरने का हर प्रयास
हो रहा निष्फल
वापस पलट कर
पाता हूँ अपने को किनारों पर ही
और
असहाय
क्रुद्ध आसमान को निहार
सोचता हूँ
भगवान् मेरा
मुझसे रूठ कर न जाने
कहा खो गया

हर प्रयत्न मेरा

बुलबुले सी जिंदगी

अंधेरों से उजालों तक जाने का
बीच राह में
गर्द के उड़ते गुब्बारों में
खो जाता है,

और
बस
रह जाते हैं अँधेरे ही अँधेरे
रोशनियों से
नाता जोड़ने की
हर कोशिश
कोशिश ही रह जाती है
क्यूंकि
भगवान् मेरा
मुझसे रूठ कर न जाने
कहा खो गया

जिज्ञासा तुम्हे मनाने की
हो चुकी समाप्त धीरे धीरे
क्योंकि
मेरी खता कितनी बड़ी है
मै नही जानता
पर
जानता हूँ
तू नही मानेगा
तू रूठ चूका है
अब शाम हो चली है
सांध्य अर्घ का समय हो चला है
परन्तु रूठे प्रभु
तेरे बिना कैसी आराधना
मान भी जाओ अब
मेरे प्रभु,
क्यूँ कर
भगवान् मेरा
मुझसे रूठ कर न जाने
कहा खो गया ||

58. सांध्य सुख का पटाक्षेप

अट्टालिकाओं के मध्य से
छन कर आती उगते सूरज की
प्रथम किरणों का पा स्पर्श
विशाल उद्द्यान में बैठा
कर रहा दृश्यावलोकन
उठते विचार और एक मनन |

अपने में केन्द्रित
विभिन्न जन समूह
हर कोई अलग सा प्रतीत
विकल्प हीन संकल्प लिए
संकल्प साधना की ओर प्रस्तावित
भुवन भास्कर की प्रथम रश्मियाँ
महानगर की इस गहमागहमी में
जीवन संचार और तेजोमय प्रकाश करती प्रवाहित

प्रातः की बेला में
अपने ही हाथों की हथेली में

प्रकाशपुंज को स्पर्श कर
भय हीन आश्वस्त
अपनी देह का प्रेम स्पर्श कर
गंभीर विश्वस्त
उर्जा प्राप्त हुई समस्त |

वेदना का उपहार
प्रति दिन जो प्राप्त हुआ
नव प्रभात में
पूजा अर्चना कर कर जो
समाप्त हुआ
परन्तु जीवन चक्र
एक संकल्प न कोई विकल्प
सांध्य अर्ध्य तक पहुंचते ही
पुनः आक्लांत हुआ
यही नियति,
यही अंतिम पड़ाव
हर प्रभात सुखमय
हर सांध्य सुख का पटाक्षेप ||

59. अतृप्त पिपासा

अनबुझी पहेलियों सी
ह्रदय भावों को बिखेरती
जीवन को करती परिभाषित
अतृप्त पिपासा

आकांक्षाओं से बड़ी
क्षमता से लड़ती
कभी शांत सरिता सी
मन को अकुलाती
मुक्त खग की

नभ पर ऊँची उड़ान सी
अतृप्त पिपासा

एकाकी वेदना का अहसास लिए
नागफनी के जंगलों में
उलझती गूम होती
अनबुझी पहेलियों को
सुलझाती
अतृप्त पिपासा |

60. आत्म-मंथन

शून्य सा आसमान
धुआ धुंआ होती जिंदगी,
टकराती सी विलुप्त |
शुरू में घनी घनी,
फिर धीरे धीरे फैलती सी ,
गूम होती सी,
बादलों के पीछे लुप्त |
धुएं का भी कोई श्रोत होता है,
धुएं का भी कोई कारण होता हैं,
जागृत या सुप्त |

आत्म-मंथन ,
निष्कर्ष,
आग-ग्लानि-वितृष्णा और
विलीन होता कल्माष धुंआ
प्रारंभ से अब तक की यात्रा,
संघर्ष और सिर्फ संघर्ष,
सोच
हिमालय सी ऊँची उडान,
अवनी से अम्बर तक की उड़ान
निष्कर्ष
घायल पंक्षी गिर पड़ा पुनः धरा पर
बाकि क्या बचा सिर्फ शून्य......
शून्य और लुप्त होता धुंवा ....|

61. आत्मा

एक आत्मा
अजर होती है,
अमर होती है
अग्नि इसे जला नही सकती
अस्त्र इस काट नही सकते,
जल इसे गला नही सकता
यह अक्षेय है,
यह अभेद्य है,
यह प्रकाशवान है,

और एक आत्मा यह भी
नित जल रही है,
सडकों पर दौड़ दौड़ झर रही है
दो आदमियों का बोझ उठाये
कड़ी दोपहरी में
गालियाँ खाती
हर दिन
तिल-तिल
मर रही है,

यह आत्मा
प्रकाश की खोज में
हर दिन साँझ होते देखती है,
हर सुबह वही सुबह
न तो प्रकाशवान है,
न ही ज्ञानवान |

62. साबुन के बुलबुले सी जिंदगी

उड़ते
साबुन के बुलबुले सी जिंदगी

बुलबुले सी जिंदगी

झांक कर देखा तो
पाया
सतरंगी झलक,
पर
फुर्र से शून्य में विलीन हो जाती है
बस उतना ही तो समय मिलता है हमें
जितना
हाथ से रेत निकलने में समय लगता है
उतनी ही तो लम्बी है |
क्यों इतना दर्द लेकर
जी रहे हैं हम
क्यूँ नफ़रत
सजोये जी रहे हम,
उठान में ढलान में
दर्द की पहचान में
मार्ग था संकटमय
दूर एक कोह में
जलती दीप शिखा
थक गयी राह दिखा
बुलबुले सी जिंदगी का
तय था यही अंत |

63. उड़ान गगन में

मुक्त गगन में
उन्मुक्त उड़ने का प्रयास किया
पर क्षितिज पर तो अभी भी कुहासा है,
पक्षी सहमे सहमे से उड़ रहे हैं
पंख नही मिले विरासत में हमें,
पर उत्सुकता , लालसा

हमें भी उड़ाना चाहती है,
देख उड़ते पंक्षी को
हमें भी ऊँचे खूब ऊँचे
उड़ने को प्रेरित करती है,
जन्मते ही,
हमने भी उड़ना चाहा,
उड़ न सके
गिर गए धरा पर ।

शुक्तिका से कुरद कुरद
मोती को निकालना चाहा,
मोती की नियति जानते हुए भी
गोताखोर बन,
आँखों में चमक लिए
खोजना उसे चाहा
पर समंदर की गहराईओं में
खोकर रह गए |

घुटन भरे इस मौसम में
आँखे खोल जीना चाहा,
क्या मिला,
नियति में कुछ और लिखा था |

कब कुहासा हटेगा,
कब चमकता मोती मिलेगा,
कब हमें भी मुक्त उड़ने को पंख लगेंगे,
कब मौसम खुशगवार होगा,
और कब हम

उन्मुक्त हो उन्मुक्त गगन मे
स्वच्छंद समीर का आनंद ले पाएंगे |

64. शाद्वल

उष्ण अंतस भाव
स्रवित होते हुए
स्मृति पटल पर
अतीत की खोज में
विचरते हैं ज्यूँ
उष्ण मरुभूमि की रेतीली धरा |

शाद्वल को प्रतीक्षा रत
चरमोत्कर्ष भावांजलि,
उपदिष्ट अन्तःकरण
निर्दिष्ट वातावरण,

समयानुकूल

सघन से तरल होते हुए
विचार,
विचार तो विचार ही हैं ?
परिस्रावित होते ही हैं
शेष अवशेष क्या...
उष्ण मरुभूमि की रेतीली धरा ||

मध्य रजनी का अर्ध चन्द्रमा
विभावरी की चादर ओढ़े
सौम्य शीतल किरणे बिखेरता,
प्रतिबिंबित चन्द्र प्रभा
मरुभूमि की बालुका राशि पर
हेम रेणु सी बिखरी
दृष्टिगत
उद्‌विग्न भावों को विराम
या
सामयिक विश्राम
पुनः पूर्ण ओज से
उष्मित भानु उदित होगा
पुनः
उष्ण भावों का क्रम सर्जित होगा
हृदय में तो बस रह ही जाएगी
उष्ण मरुभूमि की रेतीली धरा ||

65. उष्णता संबंधों की

उष्णता
संबंधों की
विलक्षणता में स्थित हैं |
अनुभव
थके थके से
निंद्रामग्न हैं |
उम्र की चाशनी में
पके हुए पकवान
फीके से हो गए हैं |
क्या
आधुनिक पाश्चात्यकरण का

प्रभाव है,
या
आत्मीयता का
अभाव है |
युगांतर
प्रलच्छित है
अंतराल
पीढ़ियों की दूरियों में
व्यवस्थित है |
अंतस की तपिश
उबलती रेत
वारिद बूंदों की नही होती अपेक्षी
एक कयास है,
अभिष्टता का प्रयास है
यही मात्र आस है ||

66. एक छोटा तन्हा सा लम्हा

एक छोटा सा कंकर भी
ठहरे पानी में हलचल कर देता है,
एक छोटा तन्हा सा लम्हा
जिंदगी को स्पंदित कर देता है,
हादसे मन को व्यथित कर देते हैं,
ह्रदय को आलोड़ित कर देते हैं,
हौसले दिल में जब मचलते हैं,
अपने आप मंजिल पाने के,
बेहतरीन रास्ते निकलते हैं,
मंजिलें अक्सर दूर अँधेरे में छुपी होती हैं,
राही वे ही सही होते हैं जो
चिर कर अँधेरा मंजिलें ढूंढ़ लेते हैं,
जो मुश्किलें पैदा होती हैं
मित्र ही अक्सर मेहरबान होते हैं,

परायों को तो हम टटोल लेते हैं,
अपने ही पीछे से घात कर देते हैं |
एक छोटा सा कंकर भी,
ठहरे पानी में हलचल कर देता है,
एक छोटा तन्हा सा लम्हा
जिंदगी को स्पंदित कर देता है |

67. एक संकरा सा पतला रास्ता

एक संकरा सा पतला मार्ग
लहराता सा
सर्प की भांति
ऊँची पर्वत शिखा पर गुम होता सा,
घने जंगलों में घिरा,
छनी छनी धुप से आलोकित
सूखे पत्तों से आच्छादित
कटीली झाड़ियों को चीरता
बादलों में विलीन

लग रहा है
उम्र की आखरी दहलीज पर
कोई वृद्ध
जिंदगी का रस सुख जाने पर
अंतिम पड़ाव ढूंढ रहा हो,
थक गया हो चल चल कर
जिंदगी के शूल झेल झेल कर
जिसकी
उम्र के अनुभव
सूखे पत्तों से बिखर गए हों
कोई उसे रौंदता जा रहा हो
बस एक छनी सी रौशनी
जिंदगी खींचे जा रही हो |

68. एकाग्रता

उपवन में फुल खिल रहे,
मेरा मन कहीं और है विचरित
कितने फुल खिले
धरा पर कितने गिरे
मेरा आँचल तो रिक्त ही है
एकाग्रता विचलित ही है

क्यूँ इतना हूँ कुंठित
क्यूँ उदासी के घेरे में फंसा हूँ
स्वप्न तो सुनहरे ही आते हैं
शीतल मंद सुरभित समीर भी
मन झकझोरने चल रही
पर फिर भी अंतस है उद्वेलित
ध्यान नही स्थिर
पुष्पों का गिरना
पतझड़ का आभाष है
या

मेरी कुंठा है अवसादित,

मेरा अस्तित्व
कहीं दूर खो गया
अनिश्चितता के भंवर में
कुंठित हो सो गया
जीवन क्यूँ गौरव-रहित
प्रतीत है
न फूलों की सुरभि
न पवन की शीतलता
न गीतों की सौम्यता
कर पा रही मुझे एकाग्र चित है
कामनाएं
बुद्धि को
मोह के अंतराल में झकझोर रही
जब बसंत चला जायेगा
पतझड़ आयेगी फिर
ह्रदय मेरा तो स्पंदन रहित है |

69. ओह एक और दिन गुजर गया

बुलबुले सी जिंदगी

ओह एक और दिन गुजर गया
अवसाद की भेंट चढ़ गया,
कितनी योजनायें बनाई थी आज की
नव उमंग के साथ प्रभात की शुरुआत होगी
सुबह सवेरे
जिंदगी की आपा धापी में
घर से बाहर जाने की जल्दि में
सब कुछ पीछे छुट गया,
और एक दिन गुजर गया

क्या तो योजनाओं को क्रियान्वन होता
किसी धनवान की गाडी ने कुचल दिया था
एक गरीब महिला को सोता,
पड़ोस की दुकान के ताले टूटे थे
लूटने वाले
किस्मत उसकी पूरी लूटे थे
थानेवाले रपट लिखने को
बीस हज़ार के लिए डटे थे
पास के अस्पताल में
मरीजों ने डाक्टरों को पीट दिया था
दवा न मिलने से करीबी कोई चल बसा था
डाक्टर बेचारे किसे अपना दुखड़ा रोयें
दवा तो बीच में ही कोई ले उडा था

भ्रस्टाचार के समाचार आ रहे थे
सरकारी कर्मचारी के घर से
दस करोड़ पाए जा रहे थे
और सड़क की दूसरी और बेचारा एक वृद्ध
भूख की वजह से मरा जा रहा था
कृषक हमारा आत्महत्या को विवश हुआ जा रहा था
देश हमारा प्रगति-पथ पर बढ़ा जा रहा था

घर लौट आया
मन वितृष्णा से घबराया
दिवस अवसाद की भेंट चढ़ गया था
फिर नया दिन आयेगा
फिर वही दुहराया जायेगा
मेरे इश्वर इतना तो बता दे
कब मैं अवसाद से मुक्त हो पाऊंगा||

70. उजालों का सन्नाटा

कितनी दीवारें
कितने घर
कितनी छतें
कितने जलते दीप
उजालों का फिर भी सन्नाटा
अपमान की घिरती चार दीवारी
अंतस की कुंठा में हठी मन
असमंजस में समाई जिंदगी
चल उड़ चल मनवा
कहीं ऐसी जगह
जहां चैन की बयार हो,
आत्मसम्मान की ठंडी फुहार हो
इनके बीच
कहीं गुम सा
एकाकी अहसास
जग की तपिश महसूस हो
हिम सी लिपटन की चाह हो
इस बंद चार दीवारी में
इन छतों के साये में
इन घरौंदों में
मेरी भावनाएं
अपमानित नही हो
मेरा सम्मान अक्षुण हो
चाँद प्रभाषित तारे
आस्मां पर टिमटिमाते रहेंगे
टिमटिमाते रहेंगे |

71. चिर विश्राम

मौसम का असर है,

या उम्र का |
क्यूँ इतना मायुश हुआ जा रहा हूँ,
सूखे ठूंठ सी लग रही है जिंदगी,
अकेला हूँ,
बिलकुल अकेला
पतझड़ के दरख़्त सा खाली खाली हो रहा हूँ,
मौसम खुशगवार हो और हरियाली आये,
नागफनी के जंगल में भटकता मै,
ढूंढ रहा हूँ एक खामोश शांत सी पगडण्डी,
घर जाने की राह,

कोई राह
तक रहा मेरी,
हजारों दुआएं की थी मैंने,
असीम सूख प्राप्त करने की,
धीरे धीरे समय समीप आ रहा है,
पिया मिलन को मन व्याकुल हो रहा है,
मालूम है
वहीँ मिलेगी चिर शान्ति,
कभी न ठूंठ हो सकने वाली फिजां,
पलाश के फूलों सी मोहक घटा,
और चिर विश्राम |

72. अनिश्चितता बढती जाती है

तीक्ष्ण प्रकाश पुंज
नेत्रों को चीरता
अपरिमेय
वास्तविकता से परे
ज्ञेय अज्ञेय श्रोत
मार्तंड सा प्रचंड
अभिशापित उद्दंड,

यूँ लगे उन्मथ करती जीवन गति
आवृति पुनरावृत्ति से पूर्ण
घटित एक घटना
पुनः घटित
न चाह कर भी क्षोबित करती है
कोई घटना घटित हो तो भुलाई जाती है

कोई अंतस को झकझोर जाती है

मानस शांति की चाह में
जाता है
अनेक राह में
अपूर्णता ही अंततः परिणाम है
अवरुद्ध मार्ग ही अंजाम है
शांति निज अंतस में है
कस्तूरी सी
ढूँढते हैं विश्व भर
निष्कर्ष
विहवलता विचलित करती जाती है
अनिश्चितता बढती जाती है ||

73. जीवन यात्रा पर निकलना पड़ेगा

दम घोंटती
अन्त विहीन रात्री
परत दर परत

अंतःकरण को झकझोरती रात्री,
अचकचा कर
चौंक कर
उठ बैठता हूँ

अकस्मात हथेली
ललाट पर चली जाती है,

है तनी हुई लकीरें
और वेदना की पुष्टि करती
सीकर बूंदें

विचारों की गुत्थी से
निकल एक विचार
तैरता हुआ आता है,
उषाकाल के स्वर्णिम व्योम में
माणिक का एक गोला प्राची से
उदित होता है,
और उदित होता है एक ख्याल
शुरू करूँगा नव जीवन
स्वर्णिम भविष्य का पुनरागमन होगा

दिन चढते भुवन भास्कर की प्रचंडता
उद्‌दंड होती जा रही है,
तीव्र पीड़ा की वेदना असहनीय होती जा रही है
यह शरीर कब तक चलेगा
कभी न कभी तो
जीवन यात्रा पर निकलना पड़ेगा

दैहिक, दैविक, भौतिक त्रय ताप
समाप्त हो कर रहेगा
सत चित आनंद
का अनुभव प्राप्त होगा
परम देव कृपालु होकर रहेंगे
यह एक विश्वास है
उषाकाल का स्वर्णिम शुभारम्भ होगा ||

74. दर्द

दर्द बढ़ कर
अन्तःस्थल से इस तरह लिपट गया

बुलबुले सी जिंदगी

ज्यूँ कोई अमरलता लिपटी हो
पीपल के वृक्ष से,
चुभन
कागज की नाँव सी
तैर रही है नालों में
डूबती उतरती,

वृक्ष की
सबसे उपरी डाली पर
बड़े प्रयत्न से बना घोंसला
प्रचंड वायु वेग से
गिर न जाये कहीं
छोटे छोटे चूजे
छोटे छोटे अंडे
गिर कर
टूट न जाये कहीं
बिखर न जाये कहीं,

निश्चित तो मात्र एक है
वह है परमधाम
सब अनिश्चितताओं को छोड़
पर्वतीय पगडण्डी सम
जीवन राह पर चल रहा हूँ मैं,
उबड़ खाबड़ मार्ग पर
अपना अंतिम लक्ष्य
ढूँढ़ रहा हूँ मैं ||

75. परिवर्तित संवेदना

देह की तंत्रियाँ
शिथिलासन्न सी हो रही हैं प्रतीत,
वेगवान समय
अबाध गति से है चालित है
समय बोध
उत्कंठ अवस्था का मानक है
उन्मुक्त चंचल प्रमादित मन
समय के बंधन से मुक्त
स्वछन्द मानसिकता का धारक है |

क्या शिथल होती देह तंत्रियाँ
जर्जर होती सोच की परिचायक है,

क्या प्रभात की प्रथम रश्मियाँ
व्योमाच्छादित विभावरी को विलुप्त करने की
भौगोलिक शिथलता की दायक है,
क्या हरित धरा पर शोभित
तुहिन बूंदों की विलुप्तता
भास्कर के प्रकोप की प्रदायक है |

प्रश्न हैं अनेक,
काल के बहाव में
जीवन के चढ़ाव में
क्षण क्षण क्षरित होती
उत्पीडित उत्कंठित अंतस वेदना
झकझोरती निष्पादित
अशांत चेतना काल की अन्तरंग
विस्फोटित भावना का
पुरस्कार या भौगोलिक विस्थापन की भांति
परिवर्तित संवेदना ||

76. एक नयी सुबह हो चुकी थी

नयन खुले जब सुबह-सुबह,
देखा हर ओर प्रकाश था,
व्युष की रक्ताभ किरणों का,
जल पर प्रतिबिंबित प्रभा का आभाष था |
हरित मखमली कालीन पर,
ओस की बुँदे चमक रही थी मोती समान,
गगन पर मुक्त पंक्षी कर रहे थे कलरव गान |
भुवन भास्कर सात घोड़ो के रथ पर सवार,
अबाधित गति से,उठ प्राची से
निकल पड़े करने क्षितिज पार,
मेरे अन्दर का दूर हो चूका था अंधकार |
और,एक नयी सुबह हो चुकी थी ||
मै भी झटक तनाव,
भय-मुक्त निकल पड़ा अपने गंतव्य,
निकल पड़ा दृढ़ कर निज मंतव्य |

मेरे अन्दर का दूर हो चूका था अंधकार
और,एक नयी सुबह हो चुकी थी |
विश्व पटल पर सुबह का आगाज़ था,
सुनहरी आभा से भारत धरा को नाज़ था |
हर जगह चर्चे ही चर्चे थे,
मोदी मोदी का स्वर हजारों में था,
एक विश्वास का मंजर नारों में था |

77. निर्जीव सा जीवन और निर्जीव हो जाता

शयनकक्ष की
खिड़की से लेटा लेटा हर दिन
देखता हूँ आस्मां को रक्ताभ होते,
एक लाल आग का गोला प्रत्येक दिन
क्षितिज के पीछे खो जाता है,
और छा जाता है एक अजीब सा सन्नाटा
न पाखियों की चहचाहट
न गायों के लौटने की खनखनाहट
उम्र का एक दिवस और समाप्त हो जाता है,

बुझी बुझी सी आँखे
और भी थक जाती हैं
सागर की लहरें
चुप चुप सी लगने लगती हैं,
निर्जीव सा जीवन और निर्जीव हो जता है,
आशाओं की किरण आयेगी
सुनहली सुबह लौटेगी
काले घने बादल छंट जायेंगे
काश ऐसा होगा
पर वर्तमान में तो
सूरज का लाल गोला
क्षितिज के पीछे छुप जाता है
और ये खोई सी नज़रें
शून्य में भविष्य को झांकती हैं |

78. हृदय शूल लगा गए

पुष्प बन सुरभित करने आये जीवन बगिया,
हृदय शूल लगा गए,
फुल न बन सके तो क्या,
कांटे मन में क्यूँ चुभा रहे |

उर-मीत बन गले से लगाया दुःख भुलाने को,
खंजर तुम चला गए,
मीत अच्छे न बन सके तो क्या,
दुश्मनी ऐसी क्यूँ निभा रहे |

सपन सजीले विश्वास के संजोये आकर मन में,
क्षण दुसरे ही लुटा गए,
आशाएं कर न सके पूरी तो क्या,
मन ऐसे निराश कर क्यूँ जा रहे |

स्पंदित करते तन का आये छुड़ाने संकट,
शिथिल तुम इसे बना गए,
मुस्कराहटें जीवन में न ला सके तो क्या,
दिखा भय दुखित क्यूँ बना रहे |

मनुज बन धरा पर जीने की राह दिखाने आये,
मृतक मन को तुम बना गए,
अगर जीवन जीना सीखा न सके तो क्या,
मरना तुम क्यूँ बता रहे |

79. बहुत पहले

बहुत पहले

बुलबुले सी जिंदगी

सीने में फौलाद हुआ करता था
पिघलते फौलाद का लाल सुनहरी रंग लिए
युवा जज्बात हुआ करता था
हर टहनी पे एक गुलाब हुआ करता था
काँटों काँटों का हिसाब हुआ करता था
महक गुलाब की सपनों तक में समाई थी
सारी रात खुशबु का सैलाब हुआ करता था
पन्नो पर बिखरे रंगों सा ख्वाब हुआ करता था
हर रंग में पाने को एक मधुर झलक
कलम की स्याही में डूबा अहसास हुआ करता था
अब
महक गुलाब की बिखर गयी
झनक गुंजार की पिघल गयी
फफोले लगे ह्रदय पर
मरहम लगाने कि की कोशिशें
जलन हुई ऐसी की
अंतरात्मा तक सिहर गयी
युवा जज्बात समय के अंतराल में
बहकर छितर गया
उम्र भर की बदमिजाजी का
सबब मिल गया ||

80. तोडती पत्थर

मैं जब तोडती थी पत्थर
मुझे देखा था निराला ने
इलाहबाद के पथ पर,
स्थितियां बदल चुकी हैं,
परिस्थितियाँ वहीं हैं
मशीनों के विशाल क्रम में
मजदूरों के श्रम में
आज भी पिसे जा रहे हैं,
रोटी कपड़ा मकान की तो छोड़ें,
रोटी की खतिर घिसे जा रहे हैं ,
स्थिति अब यह है
मशीनों के जंगल में
पत्थर तोडना भी कला है,
जो नही जानता कला
वो घर के लिए बला है,
त्रस्त ध्वस्त पस्त
आज का मेहनतकश

कितना बेबश
पाश्चात्य दौड़
न इधर का न उधर का,
कौन बने रखक
कौन बने संरक्षक
अधिकतर भक्षक
पूंजीवाद का जमाना है,
देश प्रगति की ओर अग्रसर
जहां मजदूरी नही है
तो दो वक़्त की रोटी
नही मयस्सर ||

81. भोर होगी

रात भर दीपक
तड़पता रहा,
उजाले की आस में
जलता रहा
उसके दर्द को किसने देखा
उसके मर्म को किसने समझा
भोर होगी
रवि रश्मिया
बिखरित होंगी
अहमियत दीपक की
विचलित होगी,
अन्धकार
कितना भी प्रगाढ़ हो,
विवशता अगाध हो,
दिवाकर के आगमन से
लुप्त हो जाती है तमसता
ब्रह्म ज्ञान का ज्योति पुंज

निस्बाध
आलोकित हो ही जाता है ||

82. ज्वार-भाटा

सिन्धु तट पर अघोषित समर छेड़े
ज्वार-भाटा
लहरों के आँचल में
समेट लेता है
समस्त गंदगियों को
साथ ही उकेरे अरमानों को
अंतस की गहनतम
गहराईयों में समावेशित हो

तूफ़ान ला देता है
ज्वार-भाटा |

मेंरा मन उद्विग्न है
उद्वेलित है
झंझावत की सहज दशा समाये
डोल रहा है,

अनुबंध रचित मानसिक विडंबनाओं में
विचलित हो कुछ बोल रहा है
ज्वार-भाटा का आवागमन
स्पंदित ह्रदय को कम्पित कर रहा है,
और कर रहा है प्रताड़ित
अंतर्मन की उठती भावनाओं को,
स्थिर स्थापित सत्य को
आस्थाओं के प्राकट्य को |

ज्वार-भाटा
सागर के ह्रदय में संगृहीत
विशाल विचारों की लड़ी
प्रस्फुटित हो बाहर आने को आतुर
विचार
धर्म के, कर्म के, मर्म के
दुःख के, सुख के, अन्दर के, बाहर के,
अपनों के, परायों के,
किस्से कहानियों के
राजा रानियों के
उत्तम तो निष्कृष्ट भी
विचार धरातल पर तो नही होते,
विचार गंभीर होते हैं सोने नही देते
विचारों का ज्वार-भाटा
कदापि अपने अनुकूल होता ||

83. हर युग में नारी की एक ही कहानी है

रामायण से महाभारत तक
हर युग में नारी की एक ही कहानी है,
विचित्र उसकी व्यथा,
विचित्र उसकी जिंदगानी है |
कभी खेल में जीती जाती है.
कभी जुए में हारी जाती है |
निज स्वाभिमान को खोजती,
अनल सी जलती जाती है,
पृथा सी हर कष्ट झेले जाती है|
क्यूँ नारी को ही अग्नि-परीक्षा देनी है पड़ती,
क्यूँ नारी ही प्रश्न चिन्ह पर पाई जाती है |
दुर्गा सी पूजी जाने वाली, लक्ष्मी सी मर्यादित,
लहू ह्रदय का दे संतानों को पोसा नारी ने,

नर से बढ़ कर कार्य किये नारी ने
फिर भी क्यूँ हाशिये पे पाई जाती है |

नर जब होता हतास
स्त्री ही पूर्णता लाती जीवन में,
नर हो जब निराश
स्त्री ही आत्मीयता दर्शाती जीवन में,
फिर भी सामग्री यह विलाशिता की
क्यूँ समझी जाती है |
जाग रहा अब समाज,
मानसिकता पुरुषों को भी बदलनी होगी,
सहचरी वो जीवन की,
सन्मान दे स्तिथियाँ भी बदलनी होंगी,
चरितार्थ करना होगा,
यामा की परिभाषा कैसे नयी बनाई जाती है |

84. टेस्सी थॉमस

कौन कहता है
नारी अबला है
भारत को
विश्व का छटा देश बनाया
आग्न्यास्त्र में
किसने
टेस्सी थोमस ने
भारत की नारी
तुझे नमन

कौन कहता है
नारी को
आगे बढ़ने के लिए
पाश्चात्य वस्त्र धारण करने पड़ते हैं
भूल भारतीयता
भूल साडी
भूल घर बच्चे
अंग्रेजी परिधान में
सजना पड़ता है
देखो
डॉ. टेस्सी थोमस को
आज भी

हर जगह सज्जित है
भारतीय परिधान में
उन्हें कोई लज्जा नही
आज देश को
गर्व से ऊँचा उठाया
नमन है उसे, नमन है !!

85. विजयादशमी

मनानी है सत्यार्थ में विजयादशमी तो,
दहन कर
अनाचार, भ्रष्टाचार, अत्याचार
के रावण का
भगवान राम ने मार पांच प्रमुख राक्षस,
अक्षय कुमार-मेघनाद-कुम्भकरण-अहिरावण-रावण
लंका पर पाई थी विजय,
काम-क्रोद्ध-मद-मोह-लोभ
के राक्षस है जो जडाभुत,
मार उन्हें पा विजय,
सच्ची विजय और
वही होगी सच्ची विजया दशमी,
अन्यथा दसानन के दस मुख की भाँती ,
पुनः पुनः जन्म लेते जायेंगे
और हम पराजित होते रहेंगे,
राम-राज्य का सपना,
बस सपना.
रहेगा अपना |

86. मात जाह्नवी

हे मात जाह्नवी
शिव जटा से हो प्रह्वाहित
रहती शिवंकर सदा जन हित,
माना हमने बहुत किये अत्याचार
संग आपके,
दूषित कर आपको हमने प्रताड़ित किया |

हरी कमल चरण से जब कुछ बुँदे
गंगाधर की जटा समाई थी
प्रफुल्लित हो धरा तुम्हारे गुण गाई थी
भागीरथ ने कर प्रयास
गंगोत्री से गंगासागर तक नहर बनाई थी,
मानव ही नही देवों ने भी तेरी स्तुति गाई थी,
हमने इसे विष बना दिया
दूषित कर आपको हमने प्रताड़ित किया ||

मातेश्वरी क्यूँ नाराज़ हो,
क्यूँ विकराल रूप धर
निरीह मानव को दण्डित कर रही,
प्रचंड वेग को समेट कुछ
कृपा करो,
शांति वरण करो, शांति वरण करो ||

87. हम भी उग रहे हैं

सूर्य नमस्कार का समय हो चला है
तमस के दुःख को हर
प्रातः रश्मिया खिलखिला रही हैं,
हल्की सी गर्माहट ताजगी परोस रही है
उनींदा जागरूक हो चला है
दूर जमी दूब पर ओस पिघल रही है
दूब की हर पत्ती के साथ
पास खड़े आम का पेड़
स्पर्धा करते हुए कह रहा है
कुछ स्थान हमें भी दो,
प्रकृति के इस आँचल में
मुक्त स्वच्छ साँसे लूँ
मानो आम एवं दूब के साथ
हम भी उग रहे हैं ,
अपनी जड़ों को खुद
गगन को चुमते हुए ढूंढ रहे हैं |

(एक रुसी रचना से प्रेरित)

88. बाल-दिवस

वह देखो
एक छोटा बच्चा
काँधे पर बोरा उठाये
कचरे से कुछ बिन रहा है
शायद अपने भविष्य को
कचरे के ढेर में ढूंढ रहा है।
उसका बाल दिवस
उसकी बोरी में बीने हुए
प्लास्टिक के टुकड़े मैं अकड़ा पड़ा है।
लगता है 67 वर्ष बाद भी
बाल दिवस वहीँ जकड़ा पड़ा है ।
उसका विद्यालय पेट की भूख में
कहीं खो गया है
खेलने के खिलौने
चन्दा मामा लेकर रूठ गया हैं

हंसी तो उसकी
माँ की झोली में सिमट
छोटी बहन के गीत में बह गयी है
बाल दिवस क्या रस्म अदायगी रह गयी है।
भारत का भविष्य
क्या यूँ ही बिखरा होगा,
सच्चा बाल दिवस तो तब होगा
जब हर फुल डाल पर खिला होगा |
==१४-११-१४

89. होली ==

काट कर जिगर जब
उसने दिल की गांठ खोली
दर्द-ये-मोहब्बत के सिवा
वह बहुत कुछ बोली
बोली तो न बोली बस
पिया आन की बतियाँ
अबके बरस बैरंग होगी
जोबन भरी होली |

होली तो हो ली
बरसा कर रंग
कर गयी ठिठोली,

बासंती पुष्पों का पराग
फाग का राग
तन बदन में लगाये आग,
दसों दिशाएं दिगंत
ढूंढें कहाँ हैं कन्त
थके नैन
नही है चैन
विरह अनंत,

प्रेम पाश हो
भ्रू विलाश हो
सजन पास हों
तभी हों सफल फागन
तभी मने बसंत |

90. बचपन

लाल हरे पीले
रंग रंगीले
सपने लेकर सोया था
बचपन की यादों में खोया था
खेल खेल में लड़ कर घर आना
आकर माँ की गोदी में दुबक जाना
सुबक सुबक कर फिर रोना
माँ का अंचल लगे तब सलोना
नैनो से जल धार जो टपकी
रोक देती माँ की ममता भरी थपकी
आँखों से बहते ये मोती
लोरी के सुरों में माँ उन्हें पिरोती
भूल सारे दुःख दर्द
सुख सपनों में खो जाऊं

बचपन के वो दिन
भुलाये भुला न पाऊं |

गली मोहल्ले के बच्चे
कितने प्यारे कितने अच्छे
निष्कपट निश्चल
कितने सच्चे
खेल खेलते कितने न्यारे न्यारे
कहाँ गए वो खेल अब बेचारे
छुप छुप्पवल, गुडिया का ब्याह
कभी धुप कभी छांह
गिल्ली डंडा, आँख मिचौली

बुलबुले सी जिंदगी

लंगड़ी घोड़ी, हंसी ठिठोली
लट्टू की नोक, कंचे की मार
गुड्डी की ढील, मंजे की धार
लड़ते झगड़ते फिर भी लगते प्यारे प्यारे
एक घर सा मोहल्ला था लोग थे अपने सारे के सारे
अब तो घर भी बेगाना सा हुआ
क्या क्या बतलाऊं
बचपन के वो दिन
भुलाये भुला न पाऊं |

होली आती,
मस्ती लाती
लगता त्यौहार मना रहे
अब तो बस सुखा सुखी
रस्म निभा रहे
न रंगों की वो टोली है
फिर कैसी होली है
कहाँ गया
वो बड़ा सा रंगों का कठौता
जिसमे पकड़ पकड़

हर शख्स को दिया जाता डुबोता
सर्र्र्ररर करती हुडदंग मचाती

रंगबाजों की टोली
मस्ती के गीत गाती आती
बूढ़े बच्चे जवान
सब में नयी उमंग जगाती
होली की खुशबु और वो रंग
अब मैं कहाँ से लाऊं
बचपन के वो दिन
भुलाये भुला न पाऊं |

बचपन में ही
बच्चे बड़े हो गए हैं,
उम्र से बहुत पहले ही वे
अपने पैरों पर खड़े हो गए हैं,
अब तो खेल निराले हैं,
कंप्यूटर विडियो के खेल
आँख फोड़ने वाले हैं=====
पीढ़ियों का यह अंतराल

पीढ़ी का न होकर
सदियों का हो गया है
परिपक्वता इतनी आ रही है
बचपन में ही पूर्ण ज्ञान हो गया है
सदी की चाल
विद्युत् गति सी अग्रसर है
विज्ञान शिखर पर
युवा विजेता सा प्रखर है,
नयी पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी की
यह खाई कैसे भर पाऊं
बचपन के वो दिन
भुलाये भुला न पाऊं |

91. मैंने देखा काम करती अबलाओं को

दूर सुदूर
ऊपर बहुत ऊपर
पहाड़ियों पर
लोह अयस्क की खदानों में
मैंने देखा
काम करती अबलाओं को
पीठ पर बंधे नन्हे शिशु
मानो उन्हें दिया जा रहा हो अभी से
प्रशिक्षण
तुम्हारा भविष्य यही है,
यही है श्रम यही है जीवन क्रम
ओडिशा ,झारखण्ड के इन वनों में
जनजाति के इन निर्मल बाल मनों में
एक तूफान सा उठता है कभी
स्वेद की धारा श्रम से सिंचित
काली मिटटी पर
शोषित हो जाती है
पोषित होता है तन
वन्य पशु कीट पतंगों से
आधुनिकता के इस युग में
आज भी देख रहा हूँ
भूख और श्रम की कसमकश,
धरा इनकी
इनका ही श्रम

ले गए कुछ पूंजीपति
व्याकुल रह गए ये
मेहनतकश |

92. संवेदनाएं

कालिदास महामूर्ख थे
जिस डाल पर बैठे थे
उसे ही काट रहे थे
लोगों ने उन्हें महाज्ञानी बना दिया
और
महाज्ञानी उधो को
मुर्ख अज्ञानी बना दिया,
क्योंकि
इश्वर ने मनुष्य को
कुछ अलग दिया
मस्तिस्क दिया चिंतन को
हृदय दिया संवेदन को
और उदर क्षुदा पूर्ति को
सबसे नीचे
ताकि मन और बुद्धि सदा सर्वोपरि रहे
परन्तु

उदर ने
दिलो-दिमाग को
परास्त कर
मनुष्य को पशु बना दिया
तभी महामूर्ख महाज्ञानी बन गए
और ज्ञानी मुर्ख
नियति

बुलबुले सी जिंदगी

समय के अंतराल में
क्षमता का अंत कर देती है,
क्षमता चिंतन की
क्षमता मनन की
क्षमता कार्यान्वयन की
क्षमता का शमन होता है
उसी पेट की आग के रास्ते
क्षमताओं के साथ अंत होता है
बुद्धि का, अंतस की भावनाओं का
और मुखर होती कल्पनाओं का,
कल्पनाएँ जो उड़ान हैं

कल्पनाएँ जो मनुज की पहचान है
कल्पनाएँ जब सूर्य को जुगनू दिखाने लग जाय
कल्पनाएँ जब इन्द्रधनुष से रंग चुराने लग जाय
तब तब भावनाओं का अतिक्रमण होता है
और तब मानव नागफनी पर विष बोता है
हे मानव
पेट तो पशुओं के पास भी होता हाँ.
पर संवेदनाएं नहीं होती
मन को सयंमित कर
संवेदनाओं को
मस्तिस्क से चालित करना ही
मनुजता है ।

93. होते घाटी में हमलों पर आक्रोश

मतलब नही हमें
क्यूँ, कैसे हुआ हमला,
कौन कर रहा इसे पोषित है,
देख शहादत सैनिकों की
हमारा खौल रहा शोणित है.

लिखी थी कविता मैंने.
“अब कोई अभिमन्यु कौरव झुण्ड में मारा न जाएगा
बंद दीवारों से दे आवाज कोई पुकारा न जाएगा
पर पता नही था चार गीदड़
सत्तरह शेरों का कर देंगे शिकार,
ऐ अति सहनशील शासन तुझे धिक्कार.

वर्षों पूर्व राष्ट्रकवि दिनकर
लिख गए,
“क्षमा शोभती उस भुजंग को जिसके पास गरल हो”
क्षमा का समय बीत चला
उगलो अब गरल,
सीमा पर सैनिक रहे विचल .

रो-रो कर जब सैनिक
शस्त्र उठाने की करें मांग
सेनानायक और देश प्रधान,
टूट गया है सब्र का बाँध
सुन लो खोल कान,
वीर सपूतों को
उस पार जाने दो,
ढूँढ़ ढूँढ़ आतंकियों को मार गिराने दो.

शहीदों की आत्मा का श्राद्ध
इस श्राद्ध-पक्ष में तब होगा
तर्पण, अर्पण, समर्पण सब होगा
जब रुधिर दुश्मनों का बह बह
सीमा पर सिंचित होगा,
एक सौ पचीस करोड़ भारतीयों का

स्वर साथ साथ छप्पन इंच सीने के
घाटी में हर हर महादेव से इंगित होगा. ||

94. बेटियां

क्या बेटे, क्या बेटियां,
मानो तो दोनों दाता के उपहार हैं,
अलग-अलग सोचना अपनी हार है |
बेटियां तो साक्षात्,
जगदम्बा है,
लक्ष्मी है,
सरस्वती है,
बाप के आँखों का तारा होती,
कहते बेटे तो एक घर सँभालते,
बेटियां तो यह घर और वह घर,
दोनों के दिल की सम्राज्ञी होती |
कभी सुना नहीं बेटियों को घर तोड़ते,
कभी सुना नही बेटियों को मुख मोड़ते,
बेटियां हर हाल में
बेटों से ज्यादा समझदार होती |

95.हज़ार के नोट पर लटके बापू

हज़ार के नोट पर लटके बापू
ख्वाबों में सो रहे थे
ध्यान से देखा तो देखा की रो रहे थे
देख वे गिरते हुए रूपये को
गिरते हुए लोगों को
होते हुए अवमूल्यन को |
अवमूल्यन
नैतिक चेतना का,
मानविय वेदना का
अवमूल्यन
उनके दिए पाठ का,
अहिंसा के जाप का |
कितना और गिरेगा
नारी को पूजने वाला यह देश
नारी अस्मिता से खेल जायगा,
हरिश्चंद्र का देश
असत्यता का पिटारा कहलायगा |
भुख से बिलखिलाते बच्चे
महंगाई की मार में

दोनों हाथों को कोसेंगे
काम नही जिन्हें वे क्या सोचेंगे |
सोचा न था
देश में कांधों की कमी हो जायगी
नारी चार कंधों में नही
एक कन्धों में ले जाई जायगी |
राजनातिक सोच को क्या होगया
आज़ादी दी थी या दे थी
दासता
चिंतन में दासता
सोच में दासता,
कर्मठता कहाँ खो गयी
कौन है जो आयेगा
नव उमंग लायेगा
पुनः खोया स्वाभिमान जगायेगा ||

96. सम्बन्ध

सम्बन्ध
उद्वेलित होते तो हैं,
जब उन्हें कुरेदा जाता है,
जब उन्हें
लांछित किया जाता है,
सम्बन्ध
एक लिखी हुई पुस्तक होते हैं
कोरा कागज
तो कदापि नही
जितना पढेंगे उतना समझेंगे
पढने के पश्चात्
पूछने की आवश्यकता नही,
समझने की अनिवार्यता नही,
सम्बन्ध अपने आप
खुलते चले जाते हैं,
जीवन मौन शुन्यता नही,
संबंधों का आधार
प्रेमानुभूति होती है
आधार हीन सम्बन्ध
सम्बन्ध नही होते हैं
एक विवशता होते हैं,
एक समायोजनता होते हैं,
निःस्पृह सम्बन्ध
आवेशित भावनाओं के द्योतक हैं
सार विहीन भाषों का उद्घोषक है,
संबंधों की प्रगाढ़ता
संबंधों की गूढता
निर्भर करती है स्वाध्याय पुष्टि पर
निर्भर करती है आत्म तुष्टि पर
आओ संबंधों को रोचक बनाएं
प्रेम अमिय घन बरसायें
निस्वार्थ भाव को दर्शायें |

97.मै पंख लगा उड़ना चाहता हूँ

एक दिवस
प्रातः
लालिमा आने के पूर्व
अकस्मात मेरे ह्रदय ने
मुझे थपथपाया
और
दी दस्तक जोरों से
कहा
इतने वर्षों मै चुप रहा
अब मौन तोड़ता हूँ
गर्मी झुलसा रही है,
वर्षा का अब कोई अंदेशा नही,
पिंजड़ा बहुत जर्जर हो चूका,
आखिर पिंजड़ा ही तो है,
इस नारकीय अंधकार में
मुझे क्यूँ बंद कर रखे हो
मै क्यूँ हूँ अपराधी
एक एक दिन गिन रहा हूँ
तोड़ पिंजड़ा
कर मुझे स्वतंत्र
मै पंख लगा उड़ना चाहता हूँ
मै स्वतंत्र होना चाहता हूँ||

98.आप मुझे जागृत करें

हे प्रभु !

जागृत रहूँ मैं,
कर सकूँ प्राप्त ज्ञान
उन श्रेष्ट पुरुषों से
तत्वज्ञ हैं जो
ज्ञान का मार्ग तो
छुरी कि तरह
तीक्ष्ण और दुस्तर धार सा
दुर्गम है
जब तक मृत्यु दूर है
जब तक वृद्धावस्था नही है
जब तक शरीर रोगाक्रांत नही हुआ
मुझे आत्म कल्याण का
कार्य कर लेना है
मुझे शाश्वत जग में
जन्म सुधार लेना है
आप मुझे जागृत करें ||

99. मेरा स्वभाव

मेरा स्वभाव
मेरी नियति,
संगृहीत भावों की स्वीकृति,

नागफनी के कांटे
हृदय शूल
बाहर उभरने को उद्धृत
वेदना गहरी और गहरी
सहेज कर रखा हुआ हूँ
आदत सी हो गयी है,
जाती से जाती हैं आदतें
अक्सर अनुभूति प्रतिपादित करती है आदतें |

100. सौम्य शांत जीवन

जीवन
सौम्य शांत
एक विस्तृत आंगन
सुरभित पुष्पों से शोभित
एक पल्लवित कानन,
देह एक दस स्तंभ का महल
जीवन उसका आंगन
सुख दुःख के खेल
प्रस्फुटित मेल
द्वेष राग लोभ मोह का द्वन्द
निपातित सुवासित मकरंद
इस आंगन की खूबियाँ
हर्ष उल्लास रंगरेलियां
नित प्रतिदिन
विभिन्न आयाम
जीवन मूल्य के विविध नाम
आये हैं इस आँगन में
जायेंगे इस आँगन से
न साकुछ साथ लाये
न कुछ साथ जाए
आंगन यूँ ही हरित
सुरभित रहा है रहेगा ||

101. सखी बसंत आया,

सखी बसंत आया,
भरा हर्ष मन के मन
नवोत्कर्ष छाया
किसलय –वसना नव-वय-लतिका
मिली मधुर प्रिय उर-तरु पतिका
मधुप-वृन्द बंदी –
पिक स्वर नभ सरसाया |
सखी बसंत आया |

हे सखी
मम हृदय कुञ्ज विहारिणी ,
सुरभि शीतानिल मत्त गयंदनी
हुआ आगमन जीवन प्रकोष्ठ में मेरे
प्रगटे रस प्रेम सिक्त घनेरे
समझो शीत फुहारें
कणिक पतित थर्राया
सखी बसंत आया |